भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 9 | **मई** 2008 | **अंक** 5

साहित्य का शिखरपुरुष

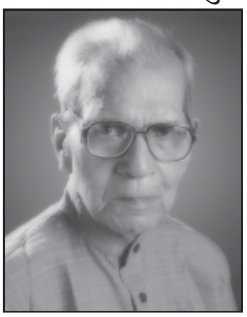

डॉ० बच्चन सिंह

(जन्म : 2 जुलाई 1919, मृत्यु : 5 अप्रैल, 2008)

क्या विचित्र संयोग है कि एक ओर हिन्दी का सहित्य-जगत आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, राष्ट्रकवि दिनकर, महादेवी वर्मा और हरिवंश राय बच्चन जैसे साहित्य-साधकों की शताब्दि-अर्चना कर रहा है, वहीं दूसरी ओर चल रहा है हिन्दी साहित्य के उन्नायकों, साधकों के वर्ष-प्रयाण का क्रम। इसी प्रयाण-क्रम में पिछले छ: माह के बीच क्रमश: डॉ० शुकदेव सिंह, श्री पुरुषोत्तमदास मोदी, कवि त्रिलोचन, डॉ० त्रिभुवन सिंह और अब डॉ० बच्चन सिंह धरती छोड़कर आगे बढ़ गए। सचमुच कोई नहीं रोक सकता कालगति। यहाँ सभी विवश हैं, नतमस्तक!

साहित्य-मनीषी डॉ० बच्चन सिंह का जीवन-यात्रावृत्त 2 जुलाई, 1919 को जौनपुर जनपद के ग्राम भदवार में आरम्भ हुआ। अपनी मिट्टी के संस्कारों की सुगंध लेकर उन्होंने प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा जौनपुर में तथा उच्च शिक्षा उदयप्रताप कॉलेज और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से ग्रहण की।

अध्ययन, अनुसंधान और अध्यापन करते हुए सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल से आरम्भ करके का०हि०वि०वि० के हिन्दी विभाग में वे प्रवक्ता व रीडर के पद पर नियुक्त हुए। यहीं पर उन्होंने नंददुलारे वाजपेयी के निर्देशन में अपना लघु शोध-प्रबंध तैयार किया जो बाद में **क्रांतिकारी कवि-निराला** के रूप में छपा। वहीं उन्होंने आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निर्देशन में **रीतिकालीन कवियों की प्रेम-व्यंजना** पर शोध-प्रबंध पूरा किया। बाद में वे हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय

(*शेष पृष्ठ तीन पर*)

महाकालाय तस्मै नमः

''आज कितने दिनों बाद हम सशरीर मिल रहे हैं, पता नहीं अगली मुलाकात कब होगी?''

''अरे भाई, हम लोगों का चला-चली का वक्त है, पता नहीं कब बुलावा आ जाए। अब वहीं चलकर मुलाकात होगी, रोज-बेनागा.....! ह:ऽह:ऽह:ऽहऽह:ऽऽ!'' फिर एक अट्टहास गूँज उठता है। यह बातचीत दिवंगत पिताश्री पुरुषोत्तमदास मोदी और स्वर्गगत डॉ० बच्चन सिंह के बीच हो रही थी। पक्षाघात से जूझने के बाद अपनी आन्तरिक ऊर्जा से पिताजी फिर विशालाक्षी भवनस्थित विश्वविद्यालय प्रकाशन के परिसर में आने लगे थे। हमेशा की तरह एक दिन डॉ० बच्चन सिंह भी वहाँ आ गए। फिर क्या था, गोष्ठी जमी। साहित्यिक हास-परिहास और ज़िन्दादिली से भरपूर उन लमहों का स्मरण करते हुए आज रोमांचित हो उठता है तन-मन। सोचता हूँ कि अभी कल की ही तो बात है, मगर आज कहाँ हैं वे लोग?

विगत 5 अप्रैल को अपने कार्यालय में बैठा कार्य कर रहा था कि दोपहर में 2-3 बजे के लगभग सूचना मिली ('गाण्डीव' समाचारपत्र के कार्यालय से एक व्यक्ति आया और उसने डॉ० बच्चन सिंह का चित्र माँगा) कि डॉ० बच्चन सिंह नहीं रहे। मैं स्तब्ध रह गया। अभी दो दिन पहले ही तो 'हेरिटेज' में उनके दर्शन किये थे। मुझे देखकर पहचानते हुए वे मुस्कुराए, उनके होंठ हिले, लगा कि जैसे कुछ कहना चाहते हों। मगर नहीं कह सके, अनकहा रह गया बहुत कुछ। मैं अपनी स्मृतियों में उसी अनकहे को सुनने की कोशिश कर रहा था। डॉ० बच्चन सिंह का 'होना' जितना सार्थक था, उनका 'न होना' उतना ही अर्थवान हो उठा है। शायद साहित्य का यही धर्म है। आज हमारे सामने उनका कृति-व्यक्तित्व उपस्थित है। उनकी समीक्षा-दृष्टि हिन्दी आलोचना के नये प्रतिमानों की खोज करती है तो उनके उपन्यास अपने कथावृत्त में बहुत-कुछ कह रहे हैं। मुखर हो उठे हैं एक-एक शब्द—अनकहे, अनसुने। इन्हीं शब्दों को सुनने की कोशिश करते हुए मैं उनके अन्तिम-दर्शन के लिए चल पड़ता हूँ।

श्मशान से लौटते ही शुरू हो जाती है ज़िन्दगी, दिन और रात की संधियों के बीच समय के प्रवाह में बहते हुए काम और काम। किन्तु महाकाल के इस महाश्मशान पर एक चिता ठंडी भी नहीं होती कि दूसरी जल उठती है, यहाँ कोई विश्रान्ति नहीं। डॉ० बच्चन सिंह के अवसान के कुछ दिनों बाद अखबार उठाते ही देखता हूँ कि काशी के जनमानस में रचे-बसे कविवर चन्द्रशेखर मिश्र ने भी इस नश्वर संसार का परित्याग कर दिया। हिन्दी के तो वे थे ही, किन्तु भोजपुरी को अपनी काव्य-रचना का माध्यम बनाकर वे आजीवन साहित्य-साधना करते रहे। उनके हर्षवर्धक काव्य-पाठ से श्रोता रस-विभोर हो उठते थे। मिश्रजी भोजपुरी के शृंगार-गीतों का गायन करते हुए अपने श्रोताओं में जहाँ माधुर्य का संचार करते थे वहीं अपने महाकाव्य 'कुँअर सिंह' के पाठ से शौर्य-साहस से परिपूर्ण वीर-भाव का संचार करते हुए बलिदान के मूल्य पर प्राप्त स्वातंत्र्य का उद्घोष करते थे। उनके काव्य 'द्रौपदी' के वाचन के बीच कौरव-सभा में द्रौपदी की चीत्कार सुनकर त्रिदंडी स्वामी

(*शेष पृष्ठ 2 पर*)

डॉ० बच्चन सिंह आलोचना की नवीनतम पद्धतियों से परिचित थे। उन्हें समीक्षा के नये-पुराने सभी औजारों का अच्छा ज्ञान था। रूप-रचना के विश्लेषण में उन औजारों का प्रयोग करना भी उन्हें आता था। एक विद्वान् वरिष्ठ समीक्षक के रूप में उनकी ख्याति भी कम नहीं थी।

डॉ० बच्चन सिंह ने आलोचना के नये औजारों से टकराने और उनकी उपयोगिता एवं औचित्य की छान-बीन करने में अधिक रुचि दिखाई थी, नये रचनाकारों की ताजा रचनाओं के विवेचन-विश्लेषण में कम। यह दूसरी बात है कि जब वे प्रतिष्ठित रचनाकारों पर विचार करते थे तब पूरी संजीदगी और सतर्कता से काम लेते थे और प्रायः प्रतिष्ठित और स्वीकृत आलोचकों से अलग हटकर अपनी बात भी कहते थे। कहा जा सकता है कि इतिहास बनाने की जगह उन्होंने इतिहास लिखने में अधिक दिलचस्पी दिखाई थी। डॉ० सिंह हमेशा अपने को परिष्कृत करते रहते थे। निरन्तर नई संवेदना से जुड़कर चलने की कोशिश करते थे किन्तु निर्णय बहुत सोच-समझकर देते थे। जब तक वे सोच समझ कर नपी तुली बात कहते थे तब तक प्रवाह आगे बढ़ जाता था। वस्तुतः वे एक इतिहास-धर्मा आलोचक थे। इसलिए वे जब कुछ नया घटित होता था तब पीछे की ओर देखकर जाँचते थे कि वह कितना ग्राह्य है। ग्रहण वे उतना ही करते थे जितने से इतिहास का नैरन्तर्य खण्डित नहीं होता। यदि उन्होंने थोड़ा जोखिम उठाया होता तो शायद इतिहास कुछ दूसरा होता।

❑ **डॉ० रामचन्द्र तिवारी**
(वरिष्ठ आलोचक)
अवकाशप्राप्त आचार्य एवं अध्यक्ष
हिन्दी विभाग
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

(पृष्ठ 1 का शेष)

करपात्रीजी की आँखों से आँसू बह चले थे। देश में, विदेश में, सर्वत्र उन्हें सम्मान मिला। उनकी रचनाएँ समादृत हुईं, वे पुरस्कार और सम्मान से नवाज़े गए। अन्त में एक वैष्णव भक्त की तरह अक्षर-चरण में क्षर-क्षर-समर्पण कर विदा हो गए। वाग्देवी के इस वरद-पुत्र को हमारा प्रणाम!

कहाँ से चले थे/कहाँ आ गए हम

एक लम्बे संघर्ष के बाद हमने स्वतंत्रता पाई और समग्र राष्ट्रीय विकास का संकल्प लेकर आगे बढ़े। हमारे प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के समाजवाद की अवधारणा भारत जैसे गरीब और विकासशील देश के लिए आवश्यक भी थी। तब गरीब और अमीर की खाई में फैला हुआ था भारत का सामाजिक-आर्थिक द्वंद्व। क्रमिक औद्योगीकीकरण और समान्तर विकास के बीच वर्गसंघर्ष ठीक से पनपने भी न पाया था कि वोट-बैंक की राजनीति ने जातीय पिछड़ेपन के आधार पर आरक्षण के दाँवपेंच आरम्भ कर दिये। नेहरू-मंत्रिमण्डल ने आरक्षण के प्रस्ताव को स्वीकृति दी। उस समय आरक्षण पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए डॉ० भीमराव अम्बेडकर ने इसे कांग्रेस द्वारा दी गयी 'खैरात' कहा। उनका स्पष्ट मंतव्य था कि दलितों-पिछड़ों को सामाजिक भेदभाव के दायरे से बाहर रखते हुए उनके विकास, उद्योग-धन्धे और शिक्षा के लिए आवश्यक सुविधाएँ और साधन मुहैया कराये जाएं, ताकि वे भी अपनी प्रतिभा और योग्यता के बल पर आगे बढ़ें, प्रतिस्पर्धा के मार्ग से अधिकार प्राप्त करें, न कि खैरात के बूते। स्पष्ट है कि डॉ० अम्बेडकर की इस सोच पर ध्यान नहीं दिया गया और उनके बाद उन्हीं के नाम पर आरक्षण बनाम खैरात बनाम वोट बैंक की राजनीति तीव्र होती चली गई। परिणाम सामने है, पहले से ही जातियों में बँटा हुआ समाज और ज़्यादा विखण्डित हो चुका है। 'मण्डल' से 'षड़मण्डल' हुई राजनीतिक सत्ता अपने बचाव में आरक्षण के नए-नए दाँव आजमाने लगी है। पिछले 10 अप्रैल को सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले में शैक्षणिक आरक्षण के सरकारी-प्रस्ताव को स्वीकारते हुए 'क्रीमीलेयर' को इस लाभ से बाहर रखने का निर्देश दिया है, साथ ही यह भी कहा है कि प्रत्येक पाँच वर्ष बाद इस कानून की समीक्षा ज़रूरी होगी। देश के राजनीतिक गलियारों में एक ओर जहाँ सुप्रीम कोर्ट के निर्णय का स्वागत हुआ है वहीं 'क्रीमीलेयर' को लेकर असमंजस बना हुआ है। देखना है कि अल्पसंख्यक, बहुसंख्यक, अगड़े, पिछड़े, दलित आदि सैकड़ों जातियों-प्रजातियों में विभाजित हमारा सामाजिक ढाँचा कब पुनः राष्ट्रीय स्वरूप धारण करेगा और कब अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को पहचानेगा ताकि समग्र विकास का पहला संकल्प पूरा हो और फिर हम नये लक्ष्य का संधान करें।

नरसंहार के हाशिए पर

दुनिया के नक्शे पर चारों ओर लाशें गिर रही हैं, मर रहे हैं आदमी, चीख रही है इन्सानियत। वह फिलीस्तीन-इज़रायल-लेबनान हो, इराक-अफगानिस्तान, दक्षिण-अमेरिका, यू०एस० हो या तिब्बत हर जगह मारा जाता है मनुष्य। सामाजिक-आर्थिक क्रान्तियों और वैज्ञानिक विकास की साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा ने 20वीं सदी में दो-दो महायुद्धों को अंजाम दिया, रक्तरंजित हो उठा धरती का मानचित्र। अपनी-अपनी जय-पराजय का जश्न मनाते, हाराकिरी करते, फिर से दुनिया चल पड़ी अपने ढर्रे पर।

दूसरे महायुद्ध की समाप्ति के बाद जहाँ भारत ने अपनी आज़ादी प्राप्त की वहीं चीन में कम्युनिस्ट-शासन स्थापित हुआ। यूरोपीय पूँजीवाद के प्रच्छन्न साम्राज्य-विस्तार के सामने चीन की दीवार अपने आसपास के इलाके को समेट कर घेराबंदी करने लगी। ताइवान से संघर्ष चलता रहा किन्तु सुशांत क्षेत्र तिब्बत उसकी ज़द में आ गया और वहाँ के प्रशासक धर्मप्रमुख दलाई लामा को अपने लाखों अनुयायियों के साथ भारत में शरण लेनी पड़ी। यहीं से शुरू हो गया चाइनीज़ ड्रैगन का दुर्दम्य अभियान जो वैश्विक स्तर पर आज भी ज़ारी है। इस वर्ष सन् 2008 के ओलम्पिक खेल का आयोजन चीन में किया जाना है। अगस्त में होनेवाले इस खेल-आयोजन के लिए यूनान से ओलम्पिक-मशाल यात्रा आरम्भ हो चुकी है जिसका चतुर्दिक विरोध चीनी-ड्रैगन के लिए चुनौती है जिसने अभी-अभी तिब्बत की राजधानी ल्हासा में सैकड़ों भिक्षुओं के निःशस्त्र जुलूस पर गोलियाँ चलाईं जिससे भारत में बसे तिब्बती ही नहीं बल्कि भारतीय भी आन्दोलित हो उठे हैं। अब वक्त आ गया है कि पूँजी और राजनीति के समीकरण नस्ल, धर्म, भाषा और संस्कृति के नाम पर नरसंहार करने के बजाय नर को नारायण बनने का अवसर दें ताकि आनेवाली शताब्दियाँ मानव की विजय-यात्रा का उद्घोष करें।

—परागकुमार मोदी

(पृष्ठ एक का शेष)

के हिन्दी विभाग में प्रोफेसर हुए, तत्पश्चात् अध्यक्ष के रूप में उन्होंने कार्य किया। वे हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति के साथ जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली व राजस्थान विश्वविद्यालय के विजिटिंग प्रोफेसर भी थे। अध्ययन-अध्यापन की सारस्वत यात्रा के बीच उनके चिन्तन-मनन की अभिव्यक्ति उनकी रचनाओं में हुई है। उन्होंने लगभग दो दर्जन पुस्तकें लिखीं।

क्रांतिकारी कवि-निराला (1947 ई०), **हिन्दी नाटक** (1954 ई०), **रीतिकालीन कवियों की प्रेम-व्यंजना** (1956 ई०), **बिहारी का नया मूल्यांकन** (1957 ई०), **समकालीन साहित्य : आलोचना को चुनौती** (1968 ई०), **आलोचक और आलोचना** (1970 ई०), **आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास** (1978 ई०), **साहित्य का समाजशास्त्र और रूपवाद** (1984 ई०), **भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र का तुलनात्मक अध्ययन** (1987 ई०), **आचार्य शुक्ल का इतिहास पढ़ते हुए** (1989 ई०), **कथाकार जैनेन्द्र** (1993 ई०), **आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द** (1994 ई०), **हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास** (1996 ई०), **उपन्यास का काव्यशास्त्र** (2008 ई०) जैसे आलोचनापरक ग्रन्थ हों या **लहरें और कगार, कई चेहरों के बाद, सूतो वा सूत पुत्रो वा, पांचाली** जैसे कथा-उपन्यास की रचना हो या विभिन्न विषयों पर **पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख,** सभी उनकी सतत साधना की फलश्रुति है।

निधन के कुछ ही दिन पहले उनकी दो पुस्तकें आईं—**निराला काव्य कोश** और **साहित्यिक निबंध : आधुनिक दृष्टि**। जीवन के अंतिम दिनों में वे **कुंती** के जीवन पर उपन्यास लिख रहे थे।

उन्हें साहित्य अकादमी के **अनुवाद पुरस्कार** तथा हिन्दी संस्थान के **साहित्य भूषण** पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

डॉ० बच्चन सिंह के दो पुत्र *(प्रो० सुरेन्द्र प्रताप व डॉ० राजीव सिंह)* तथा दो पुत्रियाँ *(कुसुम सिंह व आशा सिंह)* हैं। 25 दिसम्बर, 2007 को उन्हें पक्षाघात हुआ। अस्पताल में उन्हें भर्ती कराया गया लेकिन उनकी हालत लगातार खराब होती गई। अध्ययन-अध्यापन और साहित्य-साधना का यह अथक यात्रावृत्त पूरा करते हुए उन्होंने 5 अप्रैल, 2008 को अपराह्न अपनी आँखें बंद कर लीं। डॉ० बच्चन सिंह का महाप्रयाण उस आचार्य-परम्परा का अवसान है जिसके प्रदत्त बीज-शब्द अपनी अर्थ-ध्वनि के साथ आज भी अनुगुंजित हैं। उस दिवंगत आत्मा के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए प्रणाम!

❑ **अनुरागकुमार मोदी**

प्रोत्साहन एवं आत्मीयता की प्रतिमूर्ति थे!

पिताजी के जाने (7 अक्टू. 07) के 1-2 दिन बाद डॉ० बच्चन सिंह का फोन आया, ''पराग! मोदीजी के जाने से मुझे बहुत आघात पहुँचा है। वे तो गए, अब क्या, कैसे करोगे? 'भारतीय वाङ्मय' के लिए क्या सोचा है? मोदीजी अन्तिम दिनों में 'भारतीय वाङ्मय' के लिए बहुत चिन्तित थे कि मेरे बाद क्या होगा! तुम कब से चौक कार्यालय आओगे? मैं स्वयं ही अत्यन्त अशक्त हूँ, तुम्हारे घर तक तो जा नहीं सकता। जब कार्यालय आना, अपना थ्री-व्हीलर भेज देना, मैं चौक तुम लोगों से मिलने आना चाहता हूँ, आगे कैसे, क्या करना है उस पर बात करना चाहता हूँ।''

मैंने कहा, ''डॉ० साहब, मैं तो एकदम स्तब्ध हूँ, कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि क्या, कैसे होगा? अभी तो 10-12 दिन बाद ही कार्यालय आना हो पायेगा, आते ही थ्री-व्हीलर भेजूँगा। पापाजी के साथ साहित्य एवं प्रकाशन चर्चा में जितना समय आपने बिताया है, उतना तो हमने भी नहीं बिताया। अब आपको ही बताना है कि क्या, कैसे करें!''

कार्यालय आने के बाद मैंने उन्हें लाने थ्री-व्हीलर भेजा। वे आए और धीरे-धीरे सीढ़ी उतर कर पापाजी की खाली पड़ी कुर्सी के सामने वाली कुर्सी पर (जहाँ डॉ० साहब हमेशा बैठा करते थे) बैठ गए। पीछे लगी पिताजी की तस्वीर को देखते हुए बहुत देर तक मौन रहे। चेहरे पर गहराती विषाद की लकीरों के साथ उनकी आँखें डबडबाती रहीं, आँसू ढुलक पड़े। मैं आकर उनके सामने पिताजी की कुर्सी पर बैठ गया। मैं भी अपने आपको रोक नहीं पाया। कुछ देर बाद वे स्वयं भी सम्भले, मुझे भी सम्भाला और बातचीत प्रारम्भ की—प्रकाशन कार्यों व 'भारतीय वाङ्मय' पर। दशकों से पापाजी के साथ उठते-बैठते पापाजी की हर कार्यविधि, अनुभूति, इच्छा, क्षमता, आवश्यकता से भली-भाँति परिचित थे डॉ० बच्चन सिंह। 'भारतीय वाङ्मय' के प्रकाशन की चिन्ता हमसे अधिक डॉ० साहब को खाये जा रही थी और व्यवस्था भी उन्होंने ही की। आज विश्वविद्यालय प्रकाशन के प्रकाशन कार्य, 'भारतीय वाङ्मय' का नियमित प्रकाशन यदि सम्भव हो पा रहा है तो इसमें डॉ० बच्चन सिंह के उस दिन कार्यालय में दिए गए अमूल्य मार्गदर्शन व परामर्श का बहुत बड़ा योगदान है। पापाजी के जाने के पश्चात् डॉ० बच्चन सिंह के ही अनुरोध पर 'भारतीय वाङ्मय' को सहारा दिया, 2-3 माह में 'भारतीय वाङ्मय' को अपने पैरों पर खड़े होने लायक बनाया काशी के वरिष्ठ साहित्यकार, प्राध्यापक डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र ने। काशी की शायद ही ऐसी कोई साहित्यिक गोष्ठी हो जिसमें आपका सम्पूर्ण योगदान न होता हो। पापाजी द्वारा आयोजित कोई भी साहित्यिक समारोह या लोकार्पण-गोष्ठी ऐसी नहीं होती थी जिसमें डॉ० बच्चन सिंह की सहभागिता न होती हो। तबियत कैसी भी हो, वे अवश्य आते थे। प्रोत्साहन की प्रतिमूर्ति थे वे।

❑ **परागकुमार मोदी**

एक थे पुरुषोत्तम मोदी

❑ डॉ० बच्चन सिंह

वाराणसी के चौक थाने की बगल में, दस कदम दाहिने, कुछ सीढ़ियाँ उतर जाने पर मिलेगा विश्वविद्यालय प्रकाशन। साफ-सुथरे, करीने से सजे रैक, रंग-बिरंगी पुस्तकें, व्यवस्थित दफ्तर। एक टेबुल के सामने एक बूढ़ा, रुग्ण, दुबला-पतला व्यक्ति सिर झुकाए कागज पर कलम गोदता, किताब या पत्रिकाओं में चश्मे के पीछे से कुछ ढूँढ़ता, निशान लगाता दिखाई पड़ेगा।... ये हैं पुरुषोत्तम मोदी। पैरों की आहट मिली नहीं कि वे आगन्तुक को पहचान लेते हैं। सिर उठाकर सलाम-दुआ करते हैं। अब वह जगह रिक्त हो गयी है। दुआ-सलाम जारी रहेगा, लेकिन आवाज दूसरी होगी। एक आवाज रैक से निकलेगी, किताबों की दरार से। उनकी हमउम्र के लोग पहचान लेंगे।...

चार-पाँच दिन पहले एक दिन मैंने उनको फोन किया। मोदीजी, अच्छी खबर है कि आप दुकान आने लगे हैं। यदि अपना थ्री-ह्वीलर भेज दें तो आपसे मुलाकात हो जाय। आपको देखने का मन करता है। थ्री-ह्वीलर मेरे दरवाजे खड़ा था। रथयात्रा, गुरुबाग, लक्सा, गोदौलिया के जाम को पार करना उफानभरी कर्मनाशा को पार करना है। अपने घर से चौक पहुँचने में पैतालिस मिनट लग गए। चालक ने मुझे पकड़कर तहखाने में पहुँचाया। 'भारतीय वाङ्मय' पर थोड़ी बात चली, फिर डॉ० धीरेन्द्रनाथ सिंह पर।... वे सबेरे मोदीजी के यहाँ आ जाते थे। दोनों देर तक साहित्यिक चखौटियाँ करते एकान्त काटते थे। एक दिन भक से धीरेन्द्र हमेशा के लिए चले गए। मोदीजी को सांघातिक चोट पहुँची। उससे वे ऊबर नहीं पाए। मैंने कहा, ''मोदीजी, मैं तो महाभारत पढ़ता हूँ। उसका लुब्बा-लुआब है—काल: पचति भूतानि। लेकिन स्वास्थ्य को देखते हुए काम कम कर दीजिए।''

वे बोले—''मेरे अतिरिक्त 'भारतीय वाङ्मय' कौन निकालेगा? मुझे इसकी चिन्ता रहती है। अब कौन करेगा इसकी चिन्ता? कोई करेगा क्या?''

''मैं चल रहा हूँ। आपको ले जाने के लिए जल्दी ही थ्री-ह्वीलर लौटा दूँगा।'' उठते-उठते मेरे मुँह से निकल गया।

कैदे हयात व बंदे गम
असल में दोनों एक हैं
मौत से पहले आदमी
ग़म से नजात पाये क्यों।

जंग जीते, मर हुए अमर !

प्रो० बच्चन सिंह नहीं रहे, यह खबर मेरे लिए चौंकाने वाली नहीं थी क्योंकि 5 अप्रैल, 2008 को दिन में दो बजे बनारस के हेरिटेज अस्पताल में जब वे अपने जीवन का अंतिम युद्ध लड़ रहे थे तब उस समय उनके दोनों पुत्रों, प्रो० सुरेन्द्र प्रताप और डॉ० राजीव सिंह के साथ वहाँ मैं भी उपस्थित था। जिस क्षण अस्पताल के प्राइवेट वार्ड में भर्ती बच्चन सिंह की सांसों को पुनर्जीवित करने की कड़ी मशक्कत डॉक्टरों द्वारा की जा रही थी, मैं ठीक उसी समय वहाँ पहुँचा और यह एक संयोग ही था कि 27 दिसम्बर, 2007 को जब उन्हें पक्षाघात हुआ था, तो उस समय उनके घर पहुँचने वालों में बाहरी व्यक्ति मैं ही था और मेरे सामने उन्हें एम.आर.ई. के लिए अस्पताल ले जाया जा रहा था। उसी समय उन्हें साहित्य अकादमी का महाभारतेर कथा के लिए *अनुवाद पुरस्कार* देने की घोषणा हुई थी। तब से अंतिम दिन तक बच्चनजी की हालत डाक्टरों की लाख कोशिश के बाद खराब होती गई। इन तीन महीनों में कम से कम दस बार मेरी उनसे मुलाकात हुई थी और हर मुलाकात में वे पहले से कमजोर दिखे थे। फरवरी के मध्य तक तो उन्हें कुछ उम्मीद दिख रही थी लेकिन उसके बाद जब भी मिले, एक कमजोर व्यक्ति की ही तरह! उन्हें धीरे-धीरे लगने लगा था कि अब जीवन थोड़ा ही है। मैं बार-बार उनसे कहता कि गरमी शुरू होते ही आप उठकर चलने लगेंगे और वे हर बार मुस्कुरा कर टाल जाते। बाद में तो यह भी बंद हो गया। 10 फरवरी, 2008 को जब मैं प्रो० रामकीर्ति शुक्ल के साथ उनके आवास पर पहुँचा, तब पहली बार मुझे लगा कि उनका आत्मविश्वास अब टूट चुका है। बात-बात में प्रो० शुक्ल की ओर मुखातिब होते उन्होंने मुझसे पूछा—''क्या तुम जानते हो कि मणिकर्णिका व हरिश्चन्द्र घाट के बीच बहुत तनाव है''? मैं अवाक-सा! और इसके पहले कि मैं कुछ कहता, बातचीत को सहज बनाने के लिए अपने सधे अंदाज में शुक्लजी ने कहा—''बाजार आखिरकार यहाँ भी तो है ही!'' और यह बात यहीं पर समाप्त हो गई। रास्ते में मैंने शुक्लजी से कहा था कि लगता है इन्हें अब अंतिम समय का भान हो रहा है। इसी प्रकार, जब अपने सहयोगी डॉ० नीरज खरे के साथ 14 मार्च, 2008 की शाम 'लाइफ केयर' अस्पताल में मिला था, तब तक वे काफी टूट चुके थे और बड़ी मुश्किल से हम यह सुन पाए थे कि उन्हें अपनी कुछ पुस्तकों का इंतजार है। कहीं न कहीं उनके भीतर निराला की कविता का स्वर भरने लगा था—

मैं अकेला!
देखता हूँ आ रही!
मेरे दिवस की सांध्य बेला।

बच्चनजी को यह कविता शुरू से ही बहुत प्रिय थी।

बच्चनजी को मैंने पहली बार बनारस में 25 अगस्त, 1995 को प्रगतिशील लेखक संघ द्वारा उन्हीं के सम्मान में आयोजित एक गोष्ठी में देखा था जिसमें प्रो० नामवर सिंह के साथ इलाहाबाद से ही प्रो० दूधनाथ सिंह और मेरे गुरुवर प्रो० सत्यप्रकाश मिश्र भी आए थे। इलाहाबाद में मार्कण्डेयजी, जो प्यार से बच्चनजी को भाई कहा करते थे, इस आयोजन की हम छात्रों से काफी रोचक ढंग से चर्चा किया करते थे। उस पूरे आयोजन में बतौर श्रोता उपस्थित मेरे मन में जो बात समझ में आई थी, वह इतनी ही थी कि बच्चनजी रीतिकाल के मर्मज्ञ हैं और आधुनिक काल में होते हुए भी मन उनका रीतिकाल में ही रमता है। बच्चनजी की पहली पुस्तक 'क्रांतिकारी कवि निराला (1947)' होने के बावजूद उनकी चर्चा जब भी इलाहाबाद में होती, सब यही कहते कि उनका शोध-प्रबंध 'रीतिकालीन कवियों की प्रेमव्यंजना' (1956) महत्त्वपूर्ण है। मतलब कि 'रीतिकाल' पर उनका शोध-प्रबंध उनकी आधुनिकता के लिए बार-बार परेशानी पैदा कर रहा था जबकि 1995 तक उनका 'हिन्दी नाटक' (1954 ई०), 'आचार्य शुक्ल का इतिहास पढ़ते हुए' (1989), 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास' (1978) आदि प्रकाशित हो चुके थे।

बाद में जब इलाहाबाद से विस्थापित होकर मैं गाजीपुर पहुँचा तब बनारस आते जाते बच्चनजी से कई बार मिलना हुआ और हर मुलाकात में बच्चन जी को आधुनिक सवालों पर ही बात करते पाया। 'रीतिकाल' से पहचान पानेवाले बच्चन सिंह, बातचीत में कभी भी रीतिकाल पर बात न करते और आधुनिक कहानी, कविता व उपन्यासों के लेखन पर विस्तार से चर्चा करते। धीरे-धीरे मैं भी उनकी पुरानी छवि से मुक्त हो रहा था और मुझे बराबर लगता कि बच्चन सिंह के साथ उनके लेखन को लेकर न तो हिन्दी समाज न्याय कर पा रहा है और न ही खुद वे। हिन्दी समाज रीतिकाल से आगे नहीं बढ़ पा रहा था और खुद बच्चन सिंह आलोचना की पाठ-केन्द्रित वैचारिक प्रवृत्तियों पर लिखने की बजाय, साहित्य की ऐतिहासिक छानबीन की ओर ज्यादा ध्यान किए हुए थे जिसकी परिणति हैं—'हिन्दी नाटक', 'हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास', 'आलोचक और आलोचना', 'भारतीय और पाश्चात्य काव्यशास्त्र' आदि। समय-समय पर कुछ उपन्यास भी लिखे। जैसे—'लहरें व कगार', 'सूतो वा सूत पुत्रो वा', 'पांचाली'। अभी 2 नवम्बर, 2007 को बेनियाबाग के पुस्तक मेले में मेरे कविता-संग्रह 'बोली बात' के साथ जिन तीन पुस्तकों का लोकार्पण हुआ उनमें एक पुस्तक उनकी भी थी—'उपन्यास का काव्यशास्त्र'।

लेकिन यह सब तो अपनी जगह। गाजीपुर में रहते और 2005 में बनारस आने के बाद मैंने बच्चन जी में सदा ही एक बेचैन युवक की बेचैनी को पाया था, जो सदा ही परिवर्तन के पक्ष में अपना मतदान करता रहा है। चाहे कोई भी विधा हो, बच्चनजी ने उसकी सीमा नहीं मानी। वे हर विधा पर व साहित्य के हर सवाल पर खुलकर और साफ बोलते थे। **नए से नए विषयों की जानकारी रखना उनकी रुचि थी और नए से नए लेखक को प्रेरित करना उनकी आदत।** बनारस में रहनेवाले को या फिर उनसे जुड़े व्यक्ति का कहीं भी कुछ भी छपा हो, वे पढ़ते और बगैर लेखक को बताये, औरों से उसकी चर्चा करते। बीच-बीच में सलाह भी देते। घर पर पहुँचते ही अपने नौकर 'हरीश' को आवाज देते और पानी के साथ एक कप चाय हाजिर हो जाती। अपने को वे नई पीढ़ी का संरक्षक मानते और हिन्दी आलोचना की वर्तमान स्थिति पर असंतोष व्यक्त करते हुए प्राय: कहते कि हिन्दी आलोचना में पाठ को लेकर कोई प्रयास नये लेखकों द्वारा नहीं किया जा रहा है। हर आलोचक की भाषा एक खास मुहावरे में कथ्य को ही आगे-पीछे व्यक्त करती है। योजनाएँ तो इतनी कि बीमार हैं, वे अस्पताल में भर्ती हैं लेकिन उत्साह इतना कि ''बस एक बार उठ जाऊँ तो कुछ अधूरे काम पूरा करना चाहता हूँ।'' मसलन 20 वर्षों में हिन्दी की युवा कविता का एक प्रतिनिधि चयन तैयार करना चाहता हूँ। इसी प्रकार कहानी और आलोचना का। साथ ही कहते—'बनारस में कुछ नहीं हो रहा है। तुम लोगों को गोष्ठी आदि करते रहना चाहिए।' और सुनो—'पुराने लोगों से कम से कम संवाद रखो अन्यथा जल्दी ही वे अपने चपेट में ले लेंगे' और चपेट में लेने का मतलब-रचना कम, प्रपंच अधिक। यहाँ के झोलों को भी वे शक की नज़र से देखते जिनमें 'आत्मा का बंजर' भरा रहता है। ऐसे लोग दिन में सौ बार 'आत्म-आत्म', चिल्लाते हैं लेकिन आत्मा शब्द से उन्हें परहेज है। 'आत्मीयता' जब 'पण्य' होती है तो ऐसा ही 'अपराध' करती है!

बहरहाल आज बच्चन सिंह नहीं है। 'निराला निवेश' में सन्नाटा है। लगता है कि शहर का एक बूढ़ा यहाँ से कहीं चला गया है। बदले में जो 'खालीपन' दे गया है वह न तो श्रद्धांजलियों से भरा जाएगा, और न ही स्मृतिपरक संस्मरणों से वह भरा जाएगा—शहर की रचनाशीलता से जिसको लेकर वे सतत प्रयत्नशील रहे। यह हम नये लोगों को करना है। उनके जाने से हमने अपना एक महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शक खो दिया है और साथ ही एक ऐसा 'ओसारा', जहाँ आप बेरोक-टोक आ जा सकते थे।

अंत में निराला की इन पंक्तियों की याद स्वाभाविक है, जो बच्चनजी को भी प्रिय थीं—''मृत्यु की बाधाएँ, बहु द्वन्द्व / पार कर कर जाते स्वच्छंद / तरंगों में भर अगणित रंग / जंग जीते, मर हुए अमर''।

❑ **श्रीप्रकाश शुक्ल**

श्रद्धांजलियाँ

बच्चन सिंह 90 वर्ष की उम्र में भी 19 वालों की जमात का प्रतिनिधित्व करते थे। लिखने-पढ़ने और राजनीतिक-सामाजिक-साहित्यिक विमर्शों के अलावा अन्य किसी मामले में उनकी दिलचस्पी नहीं थी। नौजवान और बच्चे उन्हें बेहद प्रिय थे। पिछले दिनों जब वे नहीं रहे तो साहित्य ही नहीं, पूर्वांचल के सामाजिक-राजनीतिक जगत में जैसे सन्नाटा छा गया। **—'हिन्दुस्तान' से साभार**

डॉ० बच्चन सिंह के निधन से हमने हिन्दी का एक महत्त्वपूर्ण लेखक खो दिया है। उनका अध्ययन-क्षेत्र व्यापक था। रीतिकालीन साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य के नये से नये लेखकों, आंदोलनों व प्रवृत्तियों के प्रति उनकी रुचि थी। उनकी मृत्यु से न केवल काशी के लेखकों बल्कि व्यापक रूप से बौद्धिक जगत में रिक्तता महसूस की जाएगी। ❑ **प्रो० चंद्रबली सिंह** (*वरिष्ठ आलोचक*)

■ ■ ■

हिन्दी साहित्य के लिए नब्बे साल में डॉ० बच्चन सिंह की सक्रियता आश्चर्यजनक थी। वे लगातार लिख रहे थे। क्या संयोग है कि साहित्य अकादमी के अनुवाद का सर्वोच्च सम्मान मिलने के साथ ही उनका निधन भी हो गया। उनके पास बहुत सारी योजनाएँ थीं जो अछूती रह गईं। बनारस में उनकी श्रेणी का आलोचना के क्षेत्र में दूसरा विद्वान नहीं है। ❑ **प्रो० केदारनाथ सिंह** (*वरिष्ठ कवि*)

■ ■ ■

डॉ० बच्चन सिंह हिन्दी के लेखक और विद्वान होने के साथ ही अपने आप में एक संगठन थे। निराला पर उनकी पुस्तक तब आई जब कायदे से निराला का मूल्यांकन भी नहीं हुआ था। उनके निधन से काशी ने अपना एक सहचर खो दिया है। ❑ **प्रो० चौथीराम यादव**

(*पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय*)

■ ■ ■

डॉ० बच्चन सिंह हिन्दी के यशस्वी एवं लोकप्रिय अध्यापक थे। साथ ही वे हिन्दी के प्रतिष्ठित आलोचक भी थे। उनकी आलोचना का क्षेत्र व्यापक था। **रीतिकालीन कवियों की प्रेम व्यंजना** और **बिहारी का नया मूल्यांकन** जैसे ग्रंथों के साथ उन्होंने नई से नई साहित्यिक प्रवृत्तियों पर सुचिंतित ग्रंथ लिखे।

❑ **प्रो० कुमार पंकज** (*अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय*)

■ ■ ■

रचनाकारों की युवा से युवा पीढ़ी के सम्पर्क में रहना बच्चन सिंह के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता थी। किसी की एक कविता या एक कहानी भी छपती थी, बच्चन सिंह उसे बुलाकर प्रोत्साहित करते। आज बनारस शहर का हर साहित्यसेवी बच्चन सिंह के निधन से दु;खी है। हमने ऐसा बड़ा व्यक्ति खो दिया है, जिससे मिलने जाने के लिए मन करता था—अपने कई जरूरी कामों को स्थगित कर। बच्चनजी शहर की पहचान थे। उनके जैसा अध्येता, सक्रिय, संवेदनशील और साहित्य के प्रति समर्पित व्यक्ति हमें शायद ही मिले। ❑ **प्रो० बलराज पाण्डेय**

(*हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय*)

■ ■ ■

प्राचीनतम पीढ़ी से नई पीढ़ी तक को डॉ० बच्चन सिंह ने अपना मुकम्मल घर मान रखा था। किताबें, नये से नये रचनाकार की रचना, गुरुओं, मित्रों और शिष्यों के जीवन को और तो और बेटे-बेटियों और पड़ोसियों के रचनात्मक जीवन को भी अपने घर की परिधि में ले लिया था। इसी क्रम में डॉ० बच्चन सिंह एक मुकम्मल घर की तलाश में आखिरी साँस तक संघर्ष करते रहे। उन्हें शत-शत प्रणाम! ❑ **डॉ० गया सिंह**

डॉ० सिंह सही अर्थों में नई व पुरानी पीढ़ी के बीच महत्त्वपूर्ण सेतु थे। प्राचीन और परम्परागत ज्ञान के साथ आधुनिक तथा नवीनतम ज्ञान-विज्ञान में उनकी समान रुचि व पकड़ थी। उनकी अदम्य ज्ञान-पिपासा एवं जिज्ञासा ही वह कारण थी, जिससे उनके सम्पर्क में आनेवाला प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित व प्रेरित होता था। ❑ **डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र**

■ ■ ■

भारतीय परिप्रेक्ष्य में विश्व-साहित्य के अधुनातन चिंतन केा आत्मसात् करने और अपने समेकित-चिंतन से छात्रों की अंतर्दृष्टि विकसित करनेवाले वास्तविक 'गुरु' के प्रति विनम्र श्रद्धांजलि। ❑ **डॉ० राजेन्द्र उपाध्याय**

■ ■ ■

बार-बार मन में यह प्रश्न कौंध रहा है—अब रथयात्रा की सड़क पर चलकर कौन नापेगा साहित्य की गहराई? कौन होगा राष्ट्रभाषा का सूक्ष्म पारखी व कुशल सारथी? ❑ **डॉ० वशिष्ठनारायण सिंह**

काशी के अन्तिम आचार्य समीक्षक थे बच्चन सिंह

चर्चित कथाकार काशीनाथ सिंह को बच्चन सिंह प्रिय छात्र, आत्मीय मित्र और छोटे भाई की तरह मानते थे। काशीनाथ ने एक व्यक्ति, एक समीक्षक और एक समाजसेवी के रूप में बच्चनजी को बहुत नजदीक से देखा है। इतने नजदीक से कि कोई और उन्हें नहीं जानता शायद.....। बच्चनजी की मृत्यु के दो घंटे बाद उन पर कुछ लिख देने का आग्रह मान लेना उनके लिए संभव नहीं था, लेकिन कुछ बातें उन्होंने की। प्रस्तुत है वे बातें—

डॉ० बच्चन सिंह के साथ सच्चे अर्थों में बनारस के साहित्य की आचार्य परम्परा का युगांत हुआ है। समीक्षक के रूप में वे इस नगर के अन्तिम आचार्य समीक्षक थे। इसका अर्थ है कि भारतीय काव्यशास्त्र की परम्परा और पाश्चात्य काव्यशास्त्र की परम्परा—दोनों पद्धतियों का समावेश था उनमें। वे मेरे गुरु थे, मुझे पढ़ाया था उन्होंने। पचपन वर्षों का संग-साथ था उनका मेरा। जब भी कोई साहित्यिक विमर्श उलझा या जटिल महसूस हुआ, मैं उनके पास पहुँच जाता था। वे मेरे ही नहीं युवतर लेखकों की प्रेरणा और ऊर्जा के स्रोत थे। आज ऐसा सरल और ज्ञानी व्यक्ति दुर्लभ है जो उनका विकल्प बनकर हमारे सामने खड़ा हो सके। उनमें सबसे बड़ी बात यह थी कि वे भाव और भावुक प्रतिभा के विरल संयोग थे। वे समीक्षक के साथ कथाकार भी थे। अन्तिम वर्षों में महाभारत उनकी सर्जना और ऊर्जा का स्रोत बन गया था। जितना संघर्षपूर्ण जीवन था उनका, वे उसपर आत्मकथा लिखना चाहते थे लेकिन उनकी यह चाहत अधूरी रह गई। वे एक साथ प्राचीनतम और आधुनिकतम दोनों में थे। हम लोगों के बीच आधुनिकता उन्हीं के माध्यम से आई। इतना सजग-सचेत और सुपठित विद्वान नगर में और कोई नहीं रह गया। वे हमारे मार्ग थे जो अब अवरुद्ध दिखाई पड़ रहा है।

डॉ० बच्चन सिंह के ज्ञान का क्षेत्र अछोर था। उन्होंने निराला पर 'क्रांतिकारी कवि निराला' उस समय लिखी जब निराला उपेक्षित पड़े थे। रीतिकाल, खासकर बिहारी आरम्भिक दिनों में उनके प्रिय विषय थे। उनका शोधकार्य रीतिकाल पर ही है, लेकिन नाटक पर लिखी उनकी पुस्तक शोध-छात्रों और अध्यापकों के बीच काफी आकर्षण का विषय बनी। 1970 के बाद हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला में उनका प्रवेश एक तरह से उनका नया जीवन था। वहीं उनकी चर्चित पुस्तक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द आई। इस पुस्तक ने आलोचकों का ही नहीं छात्रों का भी ध्यान अपनी ओर खींचा। इसके बाद उनकी रुचि साहित्य के इतिहास में हुई। विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण करने के बाद भी उन्होंने हिन्दी साहित्य का इतिहास, हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, आचार्य शुक्ल को पढ़ते हुए लिखी। यहीं से उनकी गणना हिन्दी के प्रथम पंक्ति के आलोचकों में की जाने लगी। डॉ० बच्चन सिंह हिन्दी साहित्य में काशी की पहचान बने। उनका छात्र होने के नाते मैं कह सकता हूँ कि इतने शिष्यवत्सल गुरु विरल ही मिलते हैं, जो अपने शिष्यों से भी मित्रवत व्यवहार करे और उन्हें भरपूर सम्मान दे। वे युवा प्रतिभाओं को सिर्फ सिखाते ही नहीं, उनसे सीखते भी थे। यह बड़प्पन दिनों-दिन दुर्लभ होता जा रहा है। आज जब बच्चनजी नहीं हैं, मैं सोच रहा हूँ सचमुच वे कितने बड़े थे। ❑ **डॉ० काशीनाथ सिंह**

रवि हुआ अस्त,
ज्योति के पत्र पर अमर/लिखा रह गया....

(**डॉ० बच्चन सिंह** की प्रथम समीक्षा-कृति '*क्रांतिकारी कवि निराला*' से)

छायावादी कवियों में निराला की कविताएँ कठिन भी थीं और आकर्षक भी, जटिल भी थीं और अर्थ की अनेकानेक छवियों से पूर्ण भी। वे 'जलद मन्द्ररव' की अनुभूत्यात्मक प्रतीति थीं। मुझे याद है कि विश्वविद्यालय के कला-संकाय में उन्हें कविता-पाठ के लिए आमंत्रित किया गया। निराला ने कला-संकाय (पुरानी इमारत) के हाल में ज्यों ही प्रवेश किया हथेलियाँ बज उठीं। छात्रों ने एक स्वर से माँग की 'जूही की कली'—'जूही की कली'। निराला को यह माँग नामंजूर थी। उन्होंने 'राम की शक्ति-पूजा' का पाठ आरंभ किया। रंग-बिरंगे सार्थक ध्वन्यात्मक बिम्बों से हाल भर गया। कविता-पाठ बन्द हुआ। निराला ने छात्रों को, और मंत्रमुग्ध छात्रों ने निराला को देखा। कुछ देर तक 'होगी जय, होगी, जय, हे पुरुषोत्तम नवीन' का अनुरणन होता रहा। यदि वह दुर्लभ काव्य-पाठ 'टेप' कर लिया गया होता तो हिन्दी-साहित्य को एक अक्षय निधि प्राप्त हो जाती।

निराला का टूटना मैंने काशी की सड़कों पर पूरा दिन उनके साथ घूमकर देखा है, दारागंज से इलाहाबाद विश्वविद्यालय तक संग-संग पैदल चलकर देखा है। उनके जीवन में त्रासद घटनाओं की कमी नहीं है। उसी तरह उनके काव्य-जीवन में भी कम त्रासदियाँ नहीं आईं। निराला की कविताओं के विरुद्ध संपादकों, आलोचकों ने अभेद्य मोर्चा बना रखा था। इसे तोड़ते-तोड़ते निराला को कितना टूटना पड़ा इसे तो उनकी जीवनी, विक्षेप चिह्नित कविताओं और 'चोटी की पकड़' जैसे उपन्यास में देखा जा सकता है। ऐसी स्थिति में निराला का एक और मन था जो कभी न टूटा—'एक और मन रहा राम का।' इस 'एक और मन' को खोजना निराला की कविता को पाना है। निराला के न थकनेवाले मन ने मोरचे को ध्वस्त कर दिया। बँधी हुई काव्यधारा निर्बंध भाव से प्रवाहित हो उठी। आज की कविता के वे भगीरथ थे। नया से नया महत्त्वपूर्ण कवि उनसे जुड़ने में गौरव का अनुभव करता था।

कवि कविता अन्वेषित नहीं करता, वह तो जीवन और समाज की आँधियों-तूफानों से जूझते, बनते-बिगड़ते, अपने व्यक्तित्व के अन्तराल के अँधेरे में दुबकी उन किरणों को तलाशता है जिसे कविता कहते हैं। इसीलिए वह बिजली की कौंध की तरह चमक उठती है। इस कौंध में पाठक जीवन और जगत् को नए सिरे से पहचानता और जीता है। निराला की कविता में अँधेरे और प्रकाश का अव्याहत युद्ध चलता रहता है। प्रकाश के रामबाण में उसे पूरी आस्था है। किन्तु युद्ध में वह क्षण भी आता है जब रामबाण भी श्रीहत और खण्डित हो जाते हैं। युद्ध स्थगित हो जाता है और कवि अपने भीतर लौटता है, आत्म-शोध करता है, अपने अन्तरालों में झाँकता है और देखता है कि वहाँ मशाल की तरह जलती हुई उसकी कविता विद्यमान है। यह छिपी हुई कविता बहुत दिनों से वहाँ मौजूद थी, कवि की प्रतीक्षा कर रही थी। घनीभूत अंधकार या स्थितियों के क्षणों में कवि उसे तलाश लेता है और अपनी कविता में उद्घाटित (रिवील) करता है। यह उद्घाटन इतिहास के एक विशेष समय में होता है। एक बार उद्घाटित होकर वह मनुष्य की अशेष संभावनाओं को रेखांकित कर देता है। युद्ध, जीत-हार, अंधकार-प्रकाश के परिवेश में मानवीय संभावनाओं की खोज का नाम है निराला की कविता।

निराला के मूल्यांकन की ट्रेजडी उनके जीवन की ट्रेजडी से कम दर्दनाक नहीं है। यह ट्रेजडी वहाँ से शुरू होती है जहाँ से उन्हें मसीहा बनाने का प्रयास आरम्भ हुआ। उन्हें 'युगाराध्य', 'महाप्राण' आदि विशेषणों से अलंकृत किया जाने लगा। घर-घर में उनकी तस्वीरें टँग गईं, पुष्प और अक्षत से पूजा होने लगी। जिस तरह अनालोचनात्मक ढंग से उनकी निन्दा की जा रही थी उसी तरह अनालोचनात्मक ढंग से उनकी प्रशंसा भी की जाने लगी। ये दोनों ही स्थितियाँ काफी खतरनाक हैं। पहली से कविता की समझदारी का रास्ता बन्द होता है तो दूसरी में समझदारी गली के अंधे मोड़ पर जा खड़ी होती है। आराधना और निन्दा से आलोचना का धंधा तो चल सकता है, स्वयं आलोचना पंगु हो जाती है।

मेरे मन में सवाल उठता है कि कोई ऐसा साहित्यकार है जो निराला की तरह अव्याहत भाव से साहित्य-साधना में सब कुछ खोकर भी निरंतर लगा रहे? रेडियो को, मीडिया को एक बार थूक दिया तो थूक दिया, फिर उधर झाँकने नहीं गए। आज तो मीडिया की ओर मीडियाकार, साहित्यकार ऐसे दौड़ रहे हैं जैसे दीपक की ओर पतंग। राजकीय महापुरुषों को साहित्यकारों के आगे निराला ने कभी सम्मान नहीं दिया।

निराला के व्यक्तित्व का निर्माण बंगाल के उस अद्वैतवादी परिवेश में हुआ था जिसका निर्माण रामकृष्ण परमहंस और विवेकानन्द ने किया था। इस अद्वैत-दर्शन को निराला ने आत्मसात् कर लिया था। बैसवाड़े का संघर्ष उनका अपना था। किसानों और मजदूरों के संघर्ष को उन्होंने देखा, सुना और झेला था। उनकी कविता में समग्रतः इन तत्त्वों को देखा जा सकता है, लेकिन उनके व्यक्तित्व की प्रखरता और विरोधियों के आक्रमण में कभी कोई समझौता नहीं हो सका। स्वयं उनका व्यक्तित्व अनेक अन्तर्विरोधों का पुंज बन गया। उनके विक्षेप के अनेकानेक कारणों में अहं को विसर्जित न कर पाने की विवशता भी थी। सन् '40 के बाद की लिखी गयी कविताओं पर विक्षेप और टूटन का गहरा प्रभाव है। फिर भी अधिकांश कविताओं में वह रचनात्मकता के स्तर से च्युत नहीं होता। जिन कविताओं में उनके टूटने की अभिव्यक्ति हुई है वे अपनी अनुभूत्यात्मक सघनता में अप्रतिम बन गई हैं।

पूर्ववर्ती कविताओं में उनके जीवन का संघर्ष, उल्लास, क्रान्तिकारिता, प्रकृति के रमणीय चित्र, प्रेमोत्सव आदि के अत्यन्त प्रभावशाली काव्यात्मक बिम्ब मिलेंगे। ऐसा मालूम पड़ता है मानो कोई महानद पहाड़ी चट्टानों को तोड़ता हुआ अव्याहत गति से बहता चला जा रहा हो। 'धारा' इस प्रवाह की प्रतिनिधि रचना है। उन्होंने लिखा है 'बहने दो /रोक-टोक से कभी नहीं रुकती है, / यौवन-मद की बाढ़ नदी की / किसे देख झुकती है?' 'जूही की कली' के पवन की यात्रा देखते ही बनती है। वह अत्यन्त स्वच्छन्द गति से नदियों, पहाड़ों, जंगलों को फलाँगता हुआ अपने गन्तव्य यात्रा का प्रतीक है। तुलसीदास की चित्रकूट-यात्रा इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि उसने तुलसीदास के जीवन को ही नहीं बदला, बल्कि भारतीय संस्कृति की मटमैली जलधारा को स्वच्छ, प्रसन्न और प्रवहमान बना दिया। यदि इन यात्राओं के साथ निराला की काव्य-यात्रा को मिला करके देखा जाय तो पता लगेगा कि उसने भी इतिवृत्तात्मकता और छन्दोबद्ध हिन्दी-काव्य की मुमूर्षु परम्परा के अवरोध को तोड़कर उसे मुक्तवृत्त की दिशा की ओर मोड़ दिया। इस तरह निर्बन्ध होकर वह कवि के मन का निश्छल उद्गार बन गई।...

डॉ० बच्चन सिंह अपने जीवन की अंतिम संध्या तक पूर्णतया सक्रिय रहे। उन्होंने अपने अंतिम साक्षात्कार में एक सवाल के जवाब में कहा था—

''आज भूमंडलीकरण-बाजारीकरण जैसे एक दो नहीं और भी बहुत से प्रत्यय हैं। युवाओं को इससे लड़ना नहीं, इनका रचनात्मक अर्थापन करना होगा। पुरानी पीढ़ी व नयी पीढ़ी के बीच कई तरह के अंतराल आ गए हैं। युवा पीढ़ी को सचेत रहना है। उनमें से कुछ ही लोग खूब पढ़ते, सोचते हैं और कुछ लिखते भी हैं। पुरानी पीढ़ी में भी अभी कुछ लोग बचे हुए हैं जो किसी से कम अपडेट नहीं हैं। नई व पुरानी पीढ़ी के बीच संवाद की जरुरत है। एक नया घर इससे बनेगा। मुझे नयी पीढ़ी से बहुत उम्मीदें हैं। उसे उपदेश या संदेश की आवश्यकता नहीं है। हाँ, उसे यह संदेश जरूर देना होगा कि दो-चार कविताएँ, कहानियाँ लिखकर कालिदास, भवभूति या निराला होने का भ्रम न पाले।''

(**डॉ० बच्चन सिंह** की प्रसिद्ध औपन्यासिक कृति '*पांचाली*' से)

एक औरत की चीख

आज मैं सम्राज्ञी हूँ, दास-दासियाँ हैं, अशेष सुविधाएँ हैं। पर यातनाभरी चीख अब भी वायु में घूम रही है। रह-रह मेरे कानों से टकरा जाती है और मैं अर्धविक्षिप्त होकर लेट रहती हूँ। इस दर्द के शमन के लिए भीम ने दु:शासन का रक्तपान किया, दुर्योधन की जाँघें तोड़ीं। किन्तु वह गया नहीं, टीसता रहता है, टीसता रहता है। औरत के साथ पुरुष-व्यवहार का वह नारकीय दृश्य इतिहास के पन्नों में सर्वदा के लिए टँक गया। पता नहीं, उसका सिलसिला कब बंद होगा? या कभी नहीं बंद होगा।...

राजसूय में किसकी अग्रपूजा हो, इसे लेकर भीष्म और शिशुपाल में लम्बी तू-तू मैं-मैं हुई। शिशुपाल ने कृष्ण पर अपशब्दों की वर्षा की, उन्हें 'गोप' कहा। कृष्ण ने सुदर्शन से उसका सिर काट लिया। राजाओं में थोड़ी हलचल हुई, फिर सब कुछ शांत। एक दहशत छा गई। दहशत आई तो फिर नहीं गई। धर्मराज को मैं क्या कहूँ। विभिन्न राजाओं द्वारा लाई गई बहुमूल्य भेंट का रखरखाव दुर्योधन को सौंपा गया। यह एक भूल थी। संभव है, इसे जानबूझ कर किया गया हो। पाण्डवों के वैभव को देखकर वह ईर्ष्यालु हो उठा।

राजसूय में एक दुर्घटना और घटी। दुर्योधन को सभा-मंडप की सैर के लिए आमंत्रित किया गया। किन्तु दानव-कला के अभिप्रायों को न समझ पाने के कारण उसने स्थल को जल और जल को स्थल मान लिया। जल में गिर कर वह बुरी तरह भींग गया। सब लोग खिलखिला कर हँस पड़े। इस अपमान ने उसके मर्म को भेद दिया। इसका बदला लेने के लिए वह कुछ भी कर सकता था।

इसके लिए वह एक औरत को, कुरुकुल की वधू को, नंगा करेगा, एकदम अप्रत्याशित था।

आज विदुर आए हैं—सीधे-सादे, धर्मपरायण व्यक्ति। वे धृतराष्ट्र का संदेश ले आए थे।... विदुर ने बताया कि धृतराष्ट्र ने एक बहुत सुन्दर मंडप बनवाया है। वे चाहते हैं कि आप लोग उसे आकर देखें और लगे हाथों जुए का खेल भी हो जाय। धर्मराज युद्ध की चुनौती चाहे न स्वीकारें पर जुए की चुनौती अस्वीकार नहीं कर सकते थे। विदुर ने कहा—''खेलना न खेलना आपका निर्णय होगा। मैं तो संदेश-वाहक भर हूँ।'' वे चले गए।

दूसरे दिन हम लोग हस्तिनापुर जा पहुँचे। चारों पाण्डव युधिष्ठिर के पीछे-पीछे आए। मुझे आश्चर्य था कि वे इतने चुप क्यों थे? किसी ने एक बार भी जुए के विरुद्ध मुँह नहीं खोला। किसी गलत बात के विरुद्ध मुँह खोलना अधर्म है क्या? अपने धर्म में जुआ खेलने की चुनौती से मुकरना क्षत्रियधर्म के विरुद्ध माना जाता है। इसी क्षत्रियधर्म के पालनार्थ पाण्डव हस्तिनापुर पहुँचे।

मैं जुआ-स्थल पर नहीं गई। वहाँ जाना, इतने पुरुषों के बीच बैठना स्त्री-आचार-संहिता के प्रतिकूल था। मैं राजमहल में थी। पर द्यूतयज्ञ का समाचार मिलता रहता था। इधर युधिष्ठिर थे उधर दुर्योधन की ओर से शकुनि खेल रहा था। शकुनि के आगे युधिष्ठिर एकदम अनाड़ी थे। शकुनि मजा हुआ खिलाड़ी। खेल शुरू होने के पहले ही कोई इसका परिणाम भाँप सकता था। यदि युधिष्ठिर दुर्योधन के साथ खेलने के लिए अड़ जाते तो जुआ न होता पर भोलेनाथ ने दुर्योधन की बात मानकर शकुनि के साथ खेलना आरम्भ किया।

युधिष्ठिर प्रत्येक दाँव पर हार रहे थे। धन-दौलत हारे, राजपाट हारे, भाई हारे और अंत में अपने को भी हार गए। कौरव चुप, पाण्डव चुप, मंडप में सन्नाटा पसर गया। किन्तु शकुनि ने हँसकर कहा—''भांजे, जुए में निराश नहीं हुआ जाता। हार-जीत तो होती ही रहती है। अभी आप के पास एक अत्यन्त मूल्यवान सम्पत्ति है—द्रौपदी। उसे दाँव पर लगाएँ और अपनी हार को जीत में बदल दीजिए।'' जुआ का नशा तब उतरता है जब जुआड़ी सब कुछ गँवा देता है।

> *''यह अजीब संयोग है कि अपने अन्तिम दिनों में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का प्रिय ग्रन्थ था 'श्रीमद्भागवत' और बच्चनजी का प्रिय ग्रन्थ हुआ 'महाभारत'। महाभारत ने उन्हें अन्तिम दम तक बाँधे रखा था। जब हिन्दी साहित्य में स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श की चर्चा शुरू हुई तो उनका ध्यान कर्ण और द्रौपदी की तरफ गया। उन्होंने इन विमर्शों की अपने ढंग से नई व्याख्या प्रस्तुत की। 'सूतो वा सूत पुत्रो वा' और 'पांचाली' उपन्यासों के द्वारा उन्होंने एक अलग पहचान बनाई।''*
>
> ❑ **डॉ० काशीनाथ सिंह**

युधिष्ठिर ने एक सजग व्यापारी की तरह अपने माल की प्रशंसा प्रारम्भ की—''द्रौपदी आज के युग की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी है, अद्वितीय, अप्रतिम। वह न लंबी है, न नाटी, न कृष्णवर्णा हैं न अतिरक्तवर्णा। उसके नील कुंचित केश हैं। उसे दाँव पर लगा रहा हूँ।

उसके नेत्रों का क्या कहना। वे शरदोत्फुल्ल के कमल के समान सुन्दर और विशाल हैं। वह पद्मगंधा है—शरतकालीन कमल की तरह। रूप में रति है, लक्ष्मी है। वह सर्वगुणसम्पन्न और प्रियंवद है। ऐसी प्रियदर्शिनी को दाँव पर लगा रहा हूँ।

स्वेद-बिन्दुओं से विभूषित उसका मुख-कमल मल्लिका के समान सुगंधित हो उठता है। उसका मध्यभाग वेदी के समान कृश है, मुख अरुणाभ है, अंग निर्लोम हैं। ऐसी सुमध्यमा सर्वांगसुन्दरी पांचालकुमारी द्रौपदी को मैं दाँव पर लगा रहा हूँ।''

सभा में बैठे हुए लोग चिल्ला उठे—''युधिष्ठिर तुम्हें धिक्कार है, धिक्कार है।'' सुना है भीष्म अवाक् ताकते रहे। द्रोण ने कान में उँगलियाँ डाल लीं, विदुर माथा थामकर बैठ गए। भूरिश्रवा, अश्वत्थामा स्तब्ध थे। इस अवस्था को चीरती हुई एक आवाज बिजली की तरह सभा पर गिरी—'जितमित्येव' मैंने जीत लिया।

मुझ पर जो कुछ बीती वह भारतीय इतिहास का सबसे काला अध्याय है, भारतीय सभ्यता और संस्कृति पर अमिट कलंक। दुर्योधन ने कहा कि अब द्रौपदी मेरे घर की दासी है। घर में झाड़ू लगाएगी। विदुर तुम उसे ले आओ। विदुर ने इस प्रकार के अधार्मिक कृत्य में शामिल होना अस्वीकार कर दिया।

थोड़ी देर में देखती हूँ कि मुझे सभा में ले जाने के लिए दुर्योधन का भेजा गया प्रतिकामी खड़ा था। उसने कहा—''द्रुपदकुमारी, युधिष्ठिर जुए में उन्मत्त होकर सब कुछ हार गए—राज, धन-दौलत, भाई और अपने को हारने के बाद आपको भी दाँव पर लगा दिया। और हार गए। अब महाराज दुर्योधन ने आपको अपने अन्त:पुर में दासी का काम करने के लिए बुलाया है।''

मैं अपमान की ज्वाला में जल उठी। मुझे अपने मूक-वधिर पतियों पर बहुत क्रोध आया। मैं सीता की तरह तेजस्वी भी नहीं थी कि धरती माता से फट जाने के लिए कहती और उसमें समा जाती। अपनी असहायता में मैं नितांत अकेली थी। यह युद्ध मुझे स्वयं लड़ना होगा। लेकिन स्त्री की एक सीमा होती है—वह भी अकेली स्त्री की।

देखती क्या हूँ कि लाल-लाल आँखों से मेरी ओर देखते हुए यमदूत की तरह दु:शासन चला आ रहा है। मैं काँप गई। पसीने से तर अपनी जगह खड़ी हो गई। उसने कहा—''पांचाली, मेरे साथ चलो। तुम जुए में जीती जा चुकी हो—धर्मानुसार जीती जा चुकी हो। तेरे प्रश्नों का उत्तर सभा में ही मिल जायेगा। अब तुम लज्जाविमुक्त होकर दुर्योधन की ओर देख सकती हो। चलो, कौरवों की सेवा करो।'' मेरे रोंगटे खड़े हो गए, पसीना छूटने लगा। जिस ओर धृतराष्ट्र की रानियाँ बैठी हुई थीं उस ओर बेतहाशा भागी। दु:शासन ने आँधी की तरह दौड़कर मेरे लहराते घुँघराले केश पकड़ लिए। थोड़े ही दिन पूर्व ये केश राजसूय यज्ञ के अवभृतस्नान में मंत्रपूत जल से सींचे गए थे। पाण्डवों के शौर्य की उपेक्षा करते हुए दु:शासन ने उन्हें बलात् पकड़ लिया। मैं टूटे हुए पेड़ की दीन लता की तरह गिर पड़ी।

वह मुझे घसीट रहा था। मैं चीख रही थी—''दु:शासन छोड़ दो मैं रजस्वला हूँ, एकवस्त्रा हूँ, सभा में जाने योग्य नहीं हूँ।'' मेरी आवाज आकाश के शून्य में अनसुनी विलीन होती जाती थी। सभा में पहुँचने के बाद भी मेरी हिचकियाँ बन्द नहीं हुई थीं। आँखों से आँसू टपक रहे थे।

दु:शासन अब भी मेरा उत्तरीय पकड़े हुए था। पाण्डव पाँच पाषाण स्तंभों की तरह निर्वाक खड़े थे। भीष्म, द्रोण, विदुर इस अन्याय को चुपचाप देख रहे हैं—स्तब्ध, जड़ीभूत। धृतराष्ट्र तो जन्म के अंधे हैं। दु:शासन ने मेरा उत्तरीय छोड़ते हुए कहा—''याज्ञसेनी, अब तुम सभा के सामने अपना प्रश्न रख सकती हो।'' ''सभ्यजनों, मेरे एक प्रश्न का उत्तर दें—क्या मैं धर्म से जीती गई हूँ? जब राजा स्वयं हार गए तब क्या उन्हें मुझे दाँव पर लगाने का अधिकार है?'' पाण्डवों की ओर मैंने क्रोध से देखा। पर वे अचल अविचल खड़े रहे।

कर्ण उठा। लोग संभ्रम में आ गए। उसने सबको शांत करते हुए कहा—''याज्ञसेनी, तुम प्रश्नों का चक्कर छोड़कर वाद-विवाद में न पड़ो। वास्तविकता को जानो। जो प्रश्न तुमने पूछा है उसका सही उत्तर पाने के लिए धर्मशास्त्र बदलना होगा। अभी तो धर्मशास्त्र कहता है कि दासी, पुत्र और स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। पता नहीं कितनी बार कहा गया है—स्त्री स्वातंत्र्यम् न अर्हति। दास, दास की पत्नी और उसके धन पर स्वामी का अधिकार होता है। तुम दासी हो और धृतराष्ट्र-पुत्र तुम्हारे स्वामी हैं। उनकी सेवा करो। चाहो तो उन्हीं में से किसी को अपना पति चुन लो। मुक्ति का एक उपाय यह भी है। दासी सामान्यत: स्वेच्छाचारी होती है। इस स्वेच्छाचार को तुम उपभोग में बदल सकती हो। युधिष्ठिर इस जीवन में पराक्रम और पुरुषार्थ की आवश्यकता नहीं समझते। उन्हें इहलोक की नहीं परलोक की चिंता है। कान खोल कर सुन लो, तुम दासी हो, पांडुपुत्र दास हैं।''

दुर्योधन मुझे अश्लील मुद्रा में जाँघ दिखाते हुए हँस रहा था। इसे देख भीम का खून खौलने लगा। वह बोला—''महायुद्ध में यदि मैं दुर्योधन की जाँघ न तोड़ डालूँ तो मुझे मरणोपरान्त पुण्यधाम न मिले।''

चीर खींचने का काम फिर आरम्भ हो गया। मैं जोर से नीबी-बन्द पकड़े हुए थी। एक जोर का झटका लगता तो मैं निर्वस्त्र हो जाती। सहसा मैं चीख उठी—''महारानियों की महारानी गांधारी, मेरी सास, महाराजाओं के महाराज मेरे श्वसुर, धृतराष्ट्र मैं नंगी की जा रही हूँ—त्राहिमाम्। त्राहिमाम्।'' मैं साश्चर्य देखती हूँ कि महारानी गांधारी दासी की उँगली पकड़े हुए तेजी से मेरी ओर चली आ रही हैं। उन्होंने लगभग चिल्लाते हुए कहा—''छोड़ दो उसे, छोड़ दो।'' दु:शासन मेरा चीर छोड़कर अलग हो गया। मैं उनके चरणों पर गिर पड़ी। उनका बोलना बन्द नहीं हुआ था। वे कह रहीं थी तुम लोग अपने शास्त्र से इसे निकाल दो—''यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता:।'' स्त्री को सभा में नंगा करने का कार्य आर्यों के इतिहास में पहली बार हो रहा है। लज्जा से माथा झुक जाता है। कुरुवधू का अपमान बंद करो।...

एक पुस्तकालय यह भी
नवजागरण का रोलमॉडल—जोकहरा

कोई जुनूनी केवल किताबें पढ़ने के लिए 18-20 किलोमीटर का सफर साइकिल पर तय कर लाइब्रेरी में पहुँचे तो उत्तर आधुनिकता के दौर में यह बात आश्चर्य का कारण बन सकती है। इंटरनेट, सूचना क्रांति, टीवी चैनलों की झकाझक के मध्य पुस्तकों के प्रति गहरा अनुराग हाल ही में आजमगढ़ के करीब जोकहरा गाँव में देखा गया। पेशे से पुलिस अधिकारी मगर शौक से लेखक व विचारक विभूतिनारायण राय को एक डेढ़ दशक पूर्व पाठक 'वर्तमान साहित्य' के संपादक के रूप में जानते थे। पाँच वर्ष पूर्व इस लघु पत्रिका को अलीगढ़ की जोड़ी नमिता सिंह व कुंवर पाल सिंह को सौंप कर विभूतिजी ने अपना ध्यान जोकहरा के पुस्तकालय पर केंद्रित किया। यहाँ सन् 1993 से संचालित श्री स्वामी रामानन्द सरस्वती पुस्तकालय किताबों के शौकीन लोगों के लिए आकर्षण का केन्द्र ही नहीं अपितु बहुविधा गतिविधियों के एक नायाब संस्थान के रूप में विकसित हो चुका है।

जोकहरा से दूरस्थ गाँव से आनेवाले भीष्मनारायण ने जीवन की सार्थकता का प्रतिबिम्ब जोकहरा पुस्तकालय में देखा। उनके अनुसार, 'आजमगढ़ का सरकारी पुस्तकालय मुर्दाघर में तब्दील हो चुका है। लोग वहाँ से पुस्तकें चुरा-चुरा कर उसे खोखला कर चुके हैं। जाहिर है पुस्तकप्रेमी जोकहरा की ओर रुख कर रहे हैं। युवा पाठक प्रमोद सेठ आजमगढ़ में कपड़े के व्यापारी हैं। किताबें पढ़ने का वक्त कब मिलता है? पूछने पर बताया—'रात के वक्त'। एक छोटे से गाँव में साहित्यिक पत्रिकाओं और किताबों के प्रति लोगों का गहरा अनुराग चकित करता है। यहाँ प्रेमचंद, शरतचंद्र, रवीन्द्रनाथ टैगोर, अमृता प्रीतम, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा के अलावा सैकड़ों लेखकों की नई व पुरानी किताबें उपलब्ध हैं। कल्पना, सारिका, धर्मयुग, दिनमान के अलावा दर्जनों पत्रिकाओं के दुर्लभ अंक सजिल्द अलमारियों में यहाँ सजे हैं। कल्पना कीजिए कुल 322 नई व पुरानी पत्रिकाओं से यह पुस्तकालय लैस है। इसके सदस्यों की संख्या 182 है। सदस्य हर रोज यहाँ से पुस्तकें पढ़ने को ले जाते हैं। विभूतिजी ने अनेक लेखकों को जोकहरा पुस्तकालय में पुस्तकें व पत्रिकाएँ दान करने के लिए प्रेरित किया।

गाँवों में पढ़ने की संस्कृति को विकसित करना जरूरी है। जोकहरा पुस्तकालय एक सशक्त शुरुआत है।

पूर्व सांसद शबाना आजमी ने एमपी लैंड फंड से 25 लाख रुपये पुस्तकालय को स्वीकृत किये और स्वयं यहाँ कैफी ब्लॉक का उद्घाटन किया।

पुस्तकालय का विस्तार एक सतत प्रक्रिया है। अब तक 50 से अधिक पत्रिकाओं के अंकों की सजिल्द फाइलें तैयार कर उन्हें आर्काइव्ज़ के रूप में संरक्षित किया गया है।

सार्वजनिक खेद प्रकाश

विश्वविद्यालय प्रकाशन द्वारा प्रकाशित मेरी पुस्तक 'अब तो बात फैल गई' के पृ० 190 पर एवं 'शब्द शिखर' अंक-8, 2007 में मैंने श्री महेन्द्र राजा जैन के विषय में लिखा है :

महेन्द्र राजा जैन ने अशोक वाजपेयी के 'कभी कभार' के विरुद्ध लिखने के लिए मुझे भी उकसाया था पर मैंने उन्हें लिख दिया था—अपने मित्रों की तरह शत्रु भी मैं स्वयं बनाता हूँ। मैं जानता हूँ कि महेन्द्र राजा जैन को उकसा कर स्वामी उन्हें बीच में ही धोखा देकर किसी और को अपने अहंकार की सेना में भर्ती करने निकल पड़ेंगे।

मैं घोषित करता हूँ कि श्री महेन्द्र राजा जैन के विषय में लिखी गयी यह बात पूर्णत: निराधार है। उन्होंने कभी भी न तो मुझे, न किसी अन्य को अशोक वाजपेयी के 'कभी कभार' के विरुद्ध लिखने को उकसाया, न स्वामी [वाहिद काजमी] के उकसाने पर उन्होंने कुछ किया और न ही मैंने श्री महेन्द्र राजा जैन को लिखा कि 'अपने मित्रों की तरह अपने शत्रु भी मैं स्वयं बनाता हूँ'। ऐसी स्थिति में श्री महेन्द्र राजा जैन के सम्बन्ध में लिखी यह पूरी बात मैं वापस लेता हूँ। मैंने अपनी इस पुस्तक के प्रकाशक को निर्देश दिया है कि इस पुस्तक की बिक्री एवं वितरण अविलम्ब रोक दें व बची हुई प्रतियाँ पुस्तक विक्रेताओं के यहाँ से वापिस मँगाएँ और इस प्रकार सभी बची हुई प्रतियों में से उपरोक्त अंश हटाने के बाद ही उन्हें बिक्री के लिए निकालें। श्री महेन्द्र राजा जैन हिन्दी के प्रतिष्ठित लेखक हैं और मैं उनका हार्दिक सम्मान करता हूँ। मैंने जो कुछ लिखा है उससे उन्हें किसी प्रकार ठेस पहुँचाना मेरा उद्देश्य नहीं था। उनका अपमान करने या उनकी छवि धूमिल करने की तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकता। फिर भी जाने-अनजाने मेरी किसी अभिव्यक्ति, शब्द-प्रयोग या टिप्पणी से उन्हें क्षोभ पहुँचा हो तो मुझे उसके लिए हार्दिक खेद है और इस विज्ञप्ति के माध्यम से मैं सार्वजनिक रूप से उनसे क्षमा चाहता हूँ।

—प्रो० कान्तिकुमार जैन, सागर

हिन्दी साहित्य का शायद ही कोई प्रतिष्ठित व नामी लेखक ऐसा हो जिसने जोकहरा में आयोजित होनेवाली संगोष्ठियों में शिरकत न की हो। उनके नामों की लम्बी फेहरिस्त है। प्रश्न यह है कि क्या पुस्तक-संस्कृति के विकास के प्रति उदासीन रहने वाला हमारा समाज जोकहरा रोल मॉडल से कोई सबक लेगा? जोकहरा ने इस मिथक को ध्वस्त किया है कि पुस्तक के प्रति पाठक की अभिरुचि कम हो रही है। लोगों में साहित्य पढ़ने की जबर्दस्त भूख है बशर्ते हम उन तक पहुँचें।

बुक थेरैपी

किताबों में है बड़ी ताकत

आप विश्वास करें या न करें, पर यह सच है कि किताबें न सिर्फ आपको, बल्कि आपके परिवार को और सम्पूर्ण मानवता को शारीरिक-मानसिक रूप से स्वस्थ रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। यदि आप अकेलापन महसूस कर रहे हैं या आपका मन उखड़ा-उखड़ा है, तो बुक शेल्फ की ओर अपने कदम बढ़ाएँ और अपनी पसंदीदा किताब लेकर उसका अध्ययन करें। आप पाएँगे कि कितनी जल्दी आपका बिगड़ा मूड बनने लगता है।

डॉक्टरों की राय

कई शोध-अध्ययनों के बाद ब्रिटिश डॉक्टर इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि ज्ञानवर्धक व प्रेरणादायक पुस्तकों के अध्ययन से आप जिन्दगी के कई उतार-चढ़ावों व मानसिक तनावों का सहजता के साथ सफलतापूर्वक सामना कर सकते हैं। चिकित्सकों की राय में दवाओं व परहेज के साथ-साथ पुस्तकों के अध्ययन से कई रोगों से जल्दी से जल्दी छुटकारा पाया जा सकता है।

प्रेरणादायक पुस्तकें उदास चेहरे पर भी उमंग का भाव पैदा कर देती हैं। डॉक्टरों ने भी पुस्तकों का महत्त्व स्वीकार किया है। पुस्तकों में वर्णित जानकारी और बुद्धिजीवियों के अनुभवों के सहारे आप एक नई सोच सृजित कर सकते हैं।

वस्तुत: किताबों के अध्ययन के माध्यम से रोगी को राहत मिलने की यह चिकित्सा पद्धति कोई नई नहीं है। विश्वविख्यात यूनानी दार्शनिक अरस्तू का मानना था कि साहित्य में रोगों को ठीक करने का गुण होता है। वहीं रोमन सभ्यता के लोगों का मानना था कि औषधियों और पुस्तक अध्ययन के मध्य कोई न कोई सम्बन्ध अवश्य है। आशय यह कि यदि चिकित्सा के दौरान औषधियों का सेवन करने के अलावा मनपसंद पुस्तकों का भी अध्ययन किया जाए तो शीघ्र स्वास्थ्य लाभ मिलता है। इतिहास गवाह है कि 18वीं शताब्दी तक यूरोप के बड़े मनोरोग चिकित्सालयों में पुस्तकालयों की स्थापना की गयी थी। यही नहीं 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध तक यूरोप के योग्य डॉक्टर मानसिक रूप से बीमार लोगों की भावनात्मक समस्याओं का इलाज करने के सन्दर्भ में किताबें पढ़ने की सलाह दिया करते थे। आजकल ब्रिटेन में बहुत से डॉक्टर डिप्रेशन, बेचैनी और एकाकीपन सरीखे मनोरोगों के इलाज में मरीजों को कुछ चुनिंदा किताबें पढ़ने की सलाह दिया करते हैं। मरीज अपने तीमारदारों के साथ पुस्तकालय में जाते हैं। पुस्तकालय के अधिकारी डॉक्टर के निर्देश के अनुसार विशेष प्रकार की किताबें लाइब्रेरी से निकालकर उस रोगी को पढ़ने के लिए देते हैं।

आत्मविश्वास बढ़ाने में सहायक

वस्तुत: किताबें आपके आत्मविश्वास को बढ़ाती हैं। अच्छी प्रेरणादायक पुस्तकें पढ़ने के बाद किसी पात्र या किरदार के माध्यम से जो प्रेरणा मिलती है, उससे रोगी उत्साहित होते हैं। अक्सर आपने देखा होगा कि जब आपको किसी साहित्यिक उपन्यास, कहानी आदि का कोई पात्र अच्छा लगता है, तो आप उसे अपने खास लोगों को पढ़ने की सलाह देते हैं। जिन लोगों ने महात्मा गांधी की आत्मकथा 'माई एक्सपीरिएन्स विद ट्रुथ' पढ़ी है, उन्हें यह मालूम होता है कि किस तरह मोहनदास करमचंद गांधी ने जिन्दगी के उतार-चढ़ावों का एक आम आदमी के तौर पर सामना करते हुए दुनिया के सर्वाधिक सशक्त साम्राज्य यानी ब्रिटिश साम्राज्य से लोहा लिया था। इसी तरह यदि हम अमेरिकी लेखक स्वेट मॉर्डन या डेल कार्नेगी की पुस्तकें पढ़ें, तो हमें विपरीत स्थितियों के मध्य जिन्दगी से लड़ने की प्रेरणा मिलती है।

धार्मिक पुस्तकों का महत्त्व

अनेक वैज्ञानिक शोध-अध्ययनों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि धार्मिक पुस्तकों के पढ़ने से मन को अत्यन्त शांति मिलती है। साथ ही किसी भी दुख को बर्दाश्त करने का साहस मिलता है और प्रतिकूल स्थितियों से लड़ने का हौसला मिलता है। प्रसिद्ध मनोचिकित्सक डॉ० जेम्स फरेरा कहते हैं कि धार्मिक पुस्तकों के पढ़ने से मन से अहंकार के भाव को दूर करने में मदद मिलती है। ऐसा इसलिए क्योंकि इन पुस्तकों में अदृश्य शक्ति की महिमा का गुणगान किया जाता है। उस महान शक्ति के समक्ष व्यक्ति अत्यन्त लघु होता है। विशेषज्ञों का मानना है कि जो लोग श्रद्धापूर्वक धार्मिक पुस्तकों को पढ़ते हैं, उनमें डिप्रेशन, उदासी या अन्य मनोरोगों के होने की सम्भावना काफी कम हो जाती है।

अच्छी दोस्त

पुस्तकों को आप अपना वास्तविक दोस्त मान सकते हैं। चाहे आप इम्तहान दे रहे हों, परीक्षा के परिणामों का इंतजार कर रहे हों, आपकी शादी होने वाली हो, आप कोई नया कारोबार शुरू करने वाले हों या किसी क्षेत्र में विशेषज्ञता हासिल करना चाहते हों। जीवन की ऐसी अनेक स्थितियों में सम्बन्धित विषय की पुस्तकें आपका दोस्त बनकर आपका मार्गदर्शन करती हैं। यदि आप ऐसे लोगों की जीवनी पढ़ते हैं, जो मामूली जीवन से ऊपर उठकर अरबपति बने हैं या जिन्होंने शून्य से शिखर तक का सफर तय किया है, तो ऐसी किताबों को पढ़कर आपको जिन्दगी में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है।

बच्चों के विकास में सहायक

अनेक ऐसी पुस्तकें हैं, जो अभिभावकों का मार्गदर्शन करती हैं कि वे अपने बच्चों की किस तरह अच्छी तरह से परवरिश करें। इसी तरह पुस्तकों के जरिए बच्चों को भी बहुत सी बातें सिखायी जा सकती हैं। बच्चों के लिए ऐसी कई चित्रात्मक पुस्तकें और कॉमिक्स आदि आती हैं, जिन्हें पढ़ाकर आप उनका ज्ञानवर्धन कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में एक बात याद रखें कि जब आप बच्चे को कोई पुस्तक पढ़ाते हैं, तो इस दौरान सिर्फ उसे पढ़ाते ही नहीं, बल्कि बच्चे के साथ आपसी-प्रेमपूर्ण संवाद भी स्थापित करते हैं। ऐसा करने से आपके और बच्चे के रिश्तों में और माधुर्य बढ़ता है। कुछ बच्चों को बोलने या उच्चारण करने में दिक्कत होती है, इस तरह की समस्या को आप पुस्तकों के माध्यम से दूर कर सकते हैं।

पढ़ने की योजना बनाएँ

मनोवैज्ञानिकों की राय में यदि आप पुस्तकें पढ़ने का आनंद उठाना चाहते हैं, तो इस सन्दर्भ में एक सुव्यवस्थित व सुनियोजित योजना बनाएँ। इस क्रम में आपको सबसे पहले उन पुस्तकों की सूची बनानी चाहिए, जिन्हें आप पहले दौर में पढ़ना चाहते हैं। फिर यह तय करें कि किस तिथि से इन्हें पढ़ना शुरू करेंगे? इसके बाद आपको यह तय करना है कि अमुक किताब के कितने पृष्ठों को आप प्रतिदिन पढ़ेंगे। हाँ, पढ़ने का वक्त आपको अपनी सुविधा के अनुसार ही निकालना होगा।

—जागरण से साभार

लोग योग की बात करते हैं। इससे मन शान्त हो जाता है। और शरीर स्वस्थ रहता है। लेकिन जब कोई अपनी मनपसन्द पुस्तक पढ़ रहा होता है, सच मानिए कि तब वह एक प्रकार से योग ही कर रहा होता है। उसका मन इसमें इतना डूब जाता है और खुशी से मग्न हो जाता है कि उसे अपने वर्तमान का ध्यान ही नहीं रहता। जब आप वर्तमान से बाहर जायें, वही तो योग है। इस प्रकार पुस्तकें पढ़कर लोग एक प्रकार से अपने डॉक्टर खुद बनकर अपना इलाज कर रहे होते हैं और यह इलाज भी इस तरह का नहीं है कि जो कोई बीमारी होने के बाद किया जाये। बल्कि यह इलाज एक ऐसा अनोखा इलाज है, जो बीमारी को होने ही नहीं देता।

—डॉ० विजय अग्रवाल

बोलीबात (कविता-संग्रह) - लेखक : श्रीप्रकाश शुक्ल

अपनी मिट्टी के सोंधेपन से सम्पृक्त 'बोली बात'

हाल में ही 'नामवर की धरती' से अपने अभियान पर निकले कवि श्रीप्रकाश शुक्ल की उद्दाम रचनाशीलता का वेग थामे नहीं थम रहा। इसी वर्ष 'नया ज्ञानोदय', 'वर्तमान साहित्य', 'वागर्थ', 'वचन', 'जनसत्ता', 'पल प्रतिपल', आदि कई पत्रिकाओं में आई कविताओं के बीच ही, उन्होंने दूसरी परम्परा के जागृतिक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पर अपनी पत्रिका 'परिचय' का विशेष अंक दिया है जिसका काफी स्वागत हुआ है। और अब यह उनका दूसरा कविता-संग्रह '**बोली बात**', जिसमें उनका कवि पूरे रौ में है। इस संग्रह की कविताओं से गुजरते हुए प्रतिष्ठित कवि विजेन्द्र का यह कथन बार-बार याद आता है, 'लोकधर्मी अंतर्वस्तु से अलग होकर कोई बड़ा और सार्थक सृजन सम्भव नहीं। लोक ही हमारे लिए वह वस्तु देता है जो हमारी कविता को न केवल सामयिक बल्कि कालातीत भी बनाती है।' इस संग्रह में हमें अपने आस-पास के बहुतेरे जीवित चित्र दिखलाई पड़ते हैं, जो हमारे देखे-सुने हैं, आत्मीय हैं।

भूमंडलीकरण की आँधी जब हमारा बहुत कुछ उड़ाये लिये जा रही है, श्रीप्रकाश शुक्ल का कवि अपनी मिट्टी की सोंधी गंध कविताओं में बचाये रखने का यत्न करता मिलता है। खाँटी देशीपन को कविताओं में जोगाकर रखने की इस रचनाकार की कोशिश, सच पूछिये तो उस लोक को ही बचाये रखने की ईमानदार कोशिश है जो हमसे छूट रहा है, छूटता जा रहा है। 'मनिहर', 'अक्कड़ बक्कड़', 'बहुरूपिये', 'गोदना', 'चोपी', 'पोतना', 'दरिद्दर', 'धूमकच', 'तीज की औरतें', 'खिचड़ी नाच', 'महतरिया माई', 'मखरोरी' ऐसी कविताएं हैं जिनमें हमारी भाग रही ज़िन्दगी के क्रम में आँख से ओझल होते चित्र दिखलाई पड़ते हैं। ये चित्र हमें अपनी उन जड़ों की याद दिलाते हैं, जिनके रस की तासीर से हममें जिन्दगी का हरापन अभी बचा हैं, लेकिन हम जिन्हें भूलते जा रहे हैं।

इन कविताओं में राजनीतिक सम्बोधनशीलता खोजना बेमानी हैं। ये कविताएँ क्रान्तिधर्मी न होकर लोकधर्मी हैं। किन्तु ये कविताएँ ग्रामीण जीवन से जुड़कर लिखी गई कविताएँ हैं। कवि 'लोक' में जाता है लेकिन एक आधुनिक मन के साथ अन्यथा 'हड़परौली', 'तीज की औरतें', जैसी कविताएं लिखी न जातीं। अनेकानेक रंजक चित्र हैं। गाँव की उदात्तता इस कवि को भाती है और लोक-वैभव उसे आकृष्ट करता है। लोक के माध्यम से कथ्य को विस्तार देने में कवि को कामयाबी मिली है। 'मनिहार' कविता कहाँ से शुरू होकर कहाँ तक जाती है, देखिए—'लेकिन वह जानता है / कलाई के रंगों के बारे में / वर्ष भर के त्यौहारों के बारे में / चूड़ियों के बारे में / बिस्मिल्ला खाँ की शहनाई के तार / सोमा घोष के गीत भी / जुड़ते हैं इसी मनिहार से /जिसमें होती हैं दुआएँ / जब वह नहीं होता /बुझती है साँझ / एक औरत के भीतर / उठती है हूक / यह मनिहार की हूक है / जो कभी अयोध्या से / तो कभी अहमदाबाद से उठ रही है। लेकिन संग्रह की सबसे सार्थक कविता है 'हड़परौली'। लोक जीवन में औरतों के हल चलाने की घटना पहली बार कविता में दर्ज की गई है। स्त्री-जीवन पर यह एक बेजोड़ कविता है। यह कविता इसलिए अलग है कि इसमें लोक की छानबीन की गई है क्योंकि लोक में जो है सबका सब ग्राह्य नहीं हो सकता। कुछ ऐसा है जो त्याज्य हैं जो त्याज्य है, उसे छोड़कर आगे बढ़ने में ही भलाई है। परम्परा का यशगान करते रहने से परम्परा का भला नहीं होगा। लोक के प्रति मुग्धता-भाव के प्रति यह कविता हमें सावधान करती है।

इस संग्रह में परिवार की पृष्ठभूमि पर कई अच्छी कविताएं हैं, जिनमें घर-परिवार, पास-पड़ोस, कथा-मिथक सबकी उपस्थिति है। 'कील' कविता में एक साथ कई पारिवारिक संदर्भ आये हैं। 'एक उदास सुबह' बड़ी सहजता से हमारे बदलते समाज में बढ़ते अजनबीपन और ठंडे पड़ते सम्बन्धों की सूक्ष्म पड़ताल करती है, जहाँ इतनी भी रब्त-जब्त नहीं कि वक्त पड़ने पर चाय की पत्ती भी माँगी जा सके। इसी कविता में आगे पति-पत्नी की नोंक-झोंक बहुत मज़ेदार है। 'नाम पट्टिका' नये मकान पर रोचक कविता है। श्रीप्रकाश शुक्ल की कविताओं में व्यक्ति-संदर्भ व स्थान-संदर्भ तथा समय-संदर्भ बार-बार आते हैं किन्तु अलग-अलग छवियों के साथ, 'लमही', 'ज़िक्र-ए-जोकहरा, 'खजुराहो', 'अलविदा गाज़ीपुर', 'अथ काशी प्रवेश' ऐसी ही कविताएं हैं। 'अक्कड़-बक्कड़' पर कविता पारिवारिक जीवन की अर्थपूर्ण क्रियाशीलता का प्रतीक है, जो परम्परा में चला आ रहा है।

संग्रह में ग्रामीण जीवन के चित्रों के साथ गँवई बोली के रसगर, चोखे और करारे शब्द इन कविताओं की काव्यभाषा को समृद्ध करते हैं, जीवंत बनाते हैं। फ्लैप पर सुविख्यात कवि केदारनाथ सिंह का कहा सच लगता है—'इस संग्रह में अनेक नए देशज शब्द ऐसे मिलेंगे जिन्हें पहली बार कविता की दुनिया की नागरिकता दी गई है।' कृत्रिम व किताबी भाषा के बरक्स ऐसी प्राणवान भाषा स्वागतेय है। इस भाषा ने श्रीप्रकाश शुक्ल के कवि कर्म को विश्वसनीयता प्रदान की है। इन कविताओं ने हिन्दी पट्टी की गँवई जातीय पहचान को भरपूर मान दिया है। अपनी इन्ही खूबियों के चलते यह संग्रह पाठकों को भायेगा। और पढ़ने के बहुत बाद तक रह-रहकर याद आता रहेगा।

❑ **शिव कुमार 'पराग'**, वाराणसी

काशी के सशक्त हस्ताक्षर

विद्वान लेखक एवं प्राध्यापक : एक रूपरेखा

श्रीप्रकाश शुक्ल

एम०ए० (हिन्दी), पी०-एचडी०

जीवन परिचय : सोनभद्र जिले के बरवाँ गाँव में 18 मई 1965 को जन्म, प्रारम्भिक शिक्षा गाँव में। उच्च शिक्षा के लिए इलाहाबाद प्रस्थान, जहाँ से हिन्दी में एम०ए० व पी-एच०डी० की उपाधि प्राप्त की।

अकादमिक नियुक्तियाँ : पहली नियुक्ति अप्रैल 1998 में राजकीय महिला महाविद्यालय, गाजीपुर में। वहीं पी०जी० कॉलेज में सन् 2000 में नियुक्ति। वर्ष 2005 से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में सेवारत।

प्रकाशित रचनाएँ : मूलत: कवि। अब तक 'जहाँ सब शहर नहीं होता' व 'बोली बात' नाम से दो काव्य-संग्रह प्रकाशित। तीसरा बनारस शहर पर केन्द्रित 'रेत में आकृतियाँ' नाम से शीघ्र प्रकाश्य। दो आलोचना पुस्तकें 'साठोत्तरी हिन्दी कविता में लोक-सौन्दर्य' तथा 'नामवर की धरती' प्रकाशित। तीसरी 'कविता की बात' शीघ्र प्रकाश्य।

सम्पादन : 'परिचय' नाम से एक लघु पत्रिका का सम्पादन। 'हजारीप्रसाद द्विवेदी : एक जागृतिक आचार्य' नाम से एक पुस्तक का सम्पादन।

सामाजिक गतिविधियाँ : सामाजिक कार्यों में गहरी रुचि। भारत ज्ञान विज्ञान समिति की गाजीपुर इकाई के अध्यक्ष के रूप में कई वर्षों तक कार्य।

आगामी योजनाएँ : भारत सरकार की एक योजना के अन्तर्गत चीन की यात्रा प्रस्तावित है।

सबसे बड़ा दु:ख : अपनों के द्वारा छला जाना।

सबसे बड़ा सुख : अपने परिवेश के प्रति कृतज्ञ होना।

नयी पीढ़ी को सन्देश : महत्त्वाकांक्षी बनो। चुनौतियों को स्वीकार करो। जो भूँकता है, वह कुछ नहीं कर पाता।

अभी-अभी : अभी-अभी साहित्य अकादमी के 'मुलाकात कार्यक्रम' के अन्तर्गत 'काव्य पाठ'।

सम्पर्क : 68, रोहितनगर, नरिया, वाराणसी-221 005

फोन : 0542-2317728, 09415890513

सम्प्रति : रीडर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ०प्र०)

अत्र-तत्र-सर्वत्र

अरुणाचल की 26 जनजातियों को एकता में पिरोये है हिन्दी

जिमीथांग। हिन्दी सिर्फ भाषा नहीं बल्कि एक ऐसा धागा है जो पूरे देश को एकता के सूत्र में पिरोता है। यह भाषण नहीं है और न ही हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में थोपने की कोई मुहिम। **हिन्दी की ताकत और उसकी व्यापकता समझनी है तो उगते सूरज की धरती यानी अरुणाचल प्रदेश में आकर देखिए।** विभिन्न संस्कृतियों और भाषाओं को हिन्दी ने फलने-फूलने का न सिर्फ धरातल दिया है बल्कि उनके बीच एक पवित्र रिश्ता भी कायम किया है। अरुणाचल के राज्यपाल जनरल जेजे सिंह भी कहते हैं, ''अगर यह राज्य देश का मस्तक है तो हिन्दी इसकी बिन्दी''। यह विचित्र लग सकता है, लेकिन है सच्चाई। उत्तर-पूर्व के सबसे बड़े राज्य असम में जहाँ भाषाई आधार पर हिन्दी बोलनेवालों के खिलाफ अभियान चलता है, वहीं सबसे ज्यादा जनजातियों व संस्कृतियों वाले अरुणाचल को हिन्दी ने ही राष्ट्रीयता की कड़ी में पिरो रखा है। अरुणाचल प्रदेश में 26 जनजातियाँ हैं। सबकी अलग-अलग स्थानीय भाषाएँ हैं। इलाका ज्यादा है और आबादी बेहद कम, मात्र 12 लाख। उसमें भी पश्चिमी हिस्से की भौगोलिक स्थिति न सिर्फ दुर्गम है, बल्कि काफी दूर-दूर छोटी-छोटी बस्तियों या गाँवों में तमाम जनजातियाँ पूरी प्रखरता के साथ अपनी पहचान कायम रखे हुए हैं। चीन की सीमा को छूनेवाले तवांग जिले के आखिरी गाँव जिमीथांग तक यही हाल है। चीन की सीमा यहाँ से बिल्कुल साफ दिखती है। भारतीय सैनिकों की आखिरी चौकी तो बूमला में है, लेकिन सबसे बड़ी आबादी वाला गाँव जिमीथांग ही है। नस्ली और सांस्कृतिक आधार पर चीन अरुणाचल पर दावा ठोकता है, लेकिन उससे बिल्कुल सटे इस गाँव में उनकी अपनी मूल भाषा चीनी तो बिल्कुल नहीं है। अलबत्ता, हिन्दी उनकी इतनी शुद्ध और प्रांजल है कि कान्वेंट संस्कृति में पढ़ रहे खांटी हिन्दीभाषी क्षेत्रों के बच्चे भी शायद ही उनसे मुकाबला कर सकें। मधुर और समृद्ध लोकगीत-संगीत के साथ यहाँ हिन्दी सिनेमा का भी पूरा असर है।

अब आठ अंकों का होगा पिनकोड

भारतीय डाक विभाग ने अब पिनकोड को छह की बजाय आठ अंकों का करने का फैसला किया है। यह कदम डाक सेवा की गति को तेज करने तथा चिट्ठियों को सही समय पर सही स्थान तक पहुँचाने के लिए उठाया गया है। डाक विभाग के निदेशक अशोक कुमार के अनुसार पिनकोड के अंत में बढ़ाए गए दो अंक डाकिए के कार्यक्षेत्र को दर्शाने का कार्य करेंगे, जिससे डाक छाँटने में आसानी हो जाएगी। उन्होंने बताया कि प्रयोग के तौर पर देश के कई स्थानों का चयन भी कर लिया गया है। पिनकोड के अंतिम दो अंक 01 से लेकर 99 तक हो सकते हैं। कुमार के अनुसार भविष्य में डाक छांटने का काम मशीन के जरिए किए जाने की योजना है।

एक दिन में ही स्नातक से डॉक्टरेट तक की उपाधि

मुजफ्फरपुर। बिहार के खगौल स्थित डीएवी स्कूल से इंटर पास डॉ० नीलेश को कैलिफोर्निया के बेलफर्ड विश्वविद्यालय ने इस वर्ष जनवरी में एक दिन में स्नातक, स्नातकोत्तर एवं डॉक्टर ऑफ साइंस की उपाधि दे दी। विश्वविद्यालय ने उसे सभी शोधपत्रों पर 95 प्रतिशत अंक दिया। विश्वविद्यालय उसे सहायक प्राध्यापक नियुक्त करने जा रहा है। छठी कक्षा से ही शोध में जुटे इस गणितज्ञ को वशिष्ठनारायण सिंह के बाद 'तीसरा रामानुजम' बताते हुए केन्द्रीय मंत्री डॉ० रघुवंश प्रसाद सिंह ने विशेष रूप से सम्मानित किया। अब तक 38 शोधपत्र प्रस्तुत कर चुके डॉ० नीलेश रॉयल सोसायटी ऑफ लंदन एवं इंडियन मैथेमेटिकल सोसायटी सहित दुनिया के गणित के कई संस्थानों के सदस्य हैं।

किताबों को बनाया गुरु

वाराणसी। बाबा रामदेव ने योग की दीक्षा किसी गुरु से नहीं ली बल्कि किताबों में देखकर सीखा और उसे अपनाया। यह सब नौ-दस वर्ष की आयु में ही शुरू कर दिया था बाबा ने। बाद में जब वह गुरुकुल गए तो वहाँ हालांकि खेल की तरह योग सिखाया जाता था लेकिन बाद में यह प्रक्रिया बाबा के शोध का हिस्सा बन गई।

प्रो० डीपी सिंह बने बीएचयू के नये कुलपति

वाराणसी। डॉ० हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (मध्य प्रदेश) के कुलपति प्रो० डी०पी० सिंह काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (बीएचयू) के नये कुलपति होंगे ।

वर्तमान में सागर विश्वविद्यालय के कुलपति के पद पर वर्ष 2004 से कार्यरत प्रो० सिंह ने बीते 26 वर्षों में शिक्षा क्षेत्र के प्रबंधन, प्रशासन, शिक्षण, प्रशिक्षण, अनुसंधान विकास से जुड़े कई उल्लेखनीय कार्य किये हैं। मूलत: एटा जिले के ग्राम सिमराऊ निवासी प्रो० सिंह के देश-विदेश में अब तक 111 शोधपत्र प्रकाशित हो चुके हैं। इतना ही नहीं, वे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय शैक्षिक परियोजनाओं के सिलसिले में जर्मनी, फ्रांस, नार्वे, चीन, आस्ट्रेलिया, मलेशिया और इंग्लैण्ड जैसे दर्जन भर से अधिक देशों में भ्रमण कर चुके हैं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के वर्तमान कुलपति प्रो० पंजाब सिंह का कार्यकाल मई के पहले हफ्ते में समाप्त हो रहा है।

अनपढ़ों की पढ़ाई, कमाई की कमाई

मानव संसाधन विकास मंत्रालय का स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग निरक्षरों को पढ़ाने की नई पहल करने जा रहा है। अब इस काम में ग्राम पंचायतों को जोड़ा जाएगा। निरक्षरों की मौजूदा सही तादाद जानने के लिए सर्वे भी होगा। सरकारी खर्चे पर निरक्षरों को साक्षर बनाने का गैर सरकारी संगठनों का काम जारी रहेगा, लेकिन सरकार खुद भी हर गाँव में अपना केन्द्र खोलेगी। लाइब्रेरी का भी इंतजाम होगा। प्रशिक्षकों को निरक्षरों के अलग-अलग समूहों को छह महीने तक रोजाना दो घंटे पढ़ाना होगा। उसके बाद निरक्षरों की परीक्षा होगी। जो पास होंगे, उन्हें सर्टिफिकेट मिलेगा। हर प्रशिक्षक को प्रति महीने एक हजार रुपये मानदेय मिलेगा। साथ ही उसके पढ़ाए निरक्षरों के छमाही परीक्षा में पास होने पर प्रोत्साहन राशि भी मिलेगी। शत-प्रतिशत सफल परिणाम वाले शिक्षकों को काबिल मानते हुए 15 प्रतिशत अंक मिलेंगे, लेकिन यदि उनके छात्र फेल हुए तो प्रति छात्र के हिसाब से आधा प्रतिशत अंक काट लिये जाएँगे। अलबत्ता बाद में उन्हें फिर से पढ़ा कर पास करा देने पर वे अंक फिर से उन्हें मिल जाएँगे। योग्यता दर्शाने वाले ये अंक सर्वशिक्षा अभियान के तहत पैरा टीचर्स की नियुक्ति में मददगार साबित हो सकते हैं।

अकबर की खूबसूरत कल्पना थी जोधा—सलमान रूश्दी

ऐसा लगता है सलमान रूश्दी का विवादों से गहरा नाता है? रूश्दी के नये उपन्यास 'द एनचैन्ट्रेस ऑफ फ्लोरेंस' ने एक बार फिर उन्हें कठघरे में खड़ा कर दिया है। रूश्दी की कलम से लिखे इस उपन्यास में कहा गया है कि जोधाबाई अकबर की खूबसूरत कल्पना थीं। रूश्दी ने अपने ज्यादातर उपन्यासों में राजनीतिक द्वंद्व को कथानक का आधार बनाया है, पर उनका नया उपन्यास 'द एनचैन्ट्रेस ऑफ फ्लोरेंस' स्त्री सौन्दर्य के प्रभाव का वर्णन करता है। रूश्दी ने जिस जोधा का वर्णन किया है उसके सौन्दर्य के आगे पुरुष विचलित हो उठते हैं। रूश्दी ने यह उपन्यास 16वीं सदी के मुगल बादशाह अकबर एवं उनकी पत्नी और प्रेमिका जोधा को केन्द्र में रखकर लिखा है।

अमेरिकी रेडियो पर गूँज रहा है भारतीय साहित्य

पिछले दो वर्षों से रेडियो पर हिन्दी सहित सात अन्य भारतीय भाषाओं का साहित्य गूँज रहा है। रेडियो सलाम नमस्ते से प्रसारित होनेवाले भारतीय भाषाओं के साहित्यिक कार्यक्रम प्रवासी भारतीयों के जीवन का अनिवार्य अंग बन चुके हैं। बीती शाम भी 'हिन्दी और प्रवासी भारतीय' विषय पर हुई चर्चा का सीधा प्रसारण किया गया।

अमेरिका में प्रसारित एफएम चैनल (104.9 एफएम) 'रेडियो सलाम नमस्ते' पर कार्यक्रम 'कवितांजलि' हर रविवार रात्रि 9 बजे से प्रसारित होता है। इसमें हिन्दी, उर्दू, तेलगू, तमिल, गुजराती, पंजाबी के साथ ही नेपाली साहित्य का प्रसारण भी होता है। कार्यक्रम संचालक आदित्य प्रकाश कहते हैं कि भारत के कई साहित्यकारों की कविताएँ सीधे फोन से प्रकाशित की जा चुकी हैं।

हाईटेक हुए संस्कृत वि. वि. के विभाग

वाराणसी। संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय को पूरी तरह से हाईटेक कर दिया गया है। विभागों को कंप्यूटरीकृत तो किया ही गया है, इन कम्प्यूटरों को नेटवर्किंग के जरिए एक दूसरे से जोड़ा भी गया है। अब क्लिक करते ही विश्वविद्यालय में कोई भी कंप्यूटरों के जरिए किसी भी तरह की सूचना पा सकेगा। इसके माध्यम से शोध-कार्यों को गतिमान करने में अत्यन्त सहायता मिलेगी।

विश्वविद्यालय के समस्त शैक्षणिक विभाग, सरस्वती भवन पुस्तकालय, अनुसंधान भवन, मुद्रणालय, परीक्षानुभाग, संग्रहालय, कुलपति कार्यालय, कुलसचिव कार्यालय आदि को वायरलेस इंटरनेट से जोड़ दिया गया है। इसके माध्यम से छात्रों को सूचनाएं निःशुल्क प्राप्त होंगी। प्रतियोगी परीक्षाएं व रोजगारसंबंधी सूचना भी छात्र प्राप्त कर सकते हैं।

साइंस से पीछे नहीं सोशल साइंस

इंटरनेशनल जर्नल विद्यार्थियों की पहुँच में

वाराणसी। साइंस, मेडिकल साइंस और प्रौद्योगिकी के विद्यार्थियों के लिए जर्नल्स की कभी कमी नहीं रही। लेकिन साइंस की तुलना में सोशल साइंस और आर्ट्स के विद्यार्थियों की पहुँच महंगे इंटरनेशनल जर्नल्स तक नहीं के बराबर है। लेकिन जल्द ही काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के केन्द्रीय लाइब्रेरी के वेबसाइट पर इन धाराओं से जुड़े इंटरनेशनल पब्लिकेशन जर्नल मौजूद होंगे।

वो जमाना लद गया जब टेक्स्ट बुक पढ़कर ही काम चला लिया जाता था। प्रतियोगिताओं के युग में हर कोई स्वयं को बेहतर और बेहतर बनाने की प्रयास में लगा है। इसके लिए अध्ययन के तरीके और अध्ययन समाग्रियों के संकलन में अन्तर आया है। विशेषकर उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले या रिसर्च से जुड़े विद्यार्थियों के लिए यह और भी जरूरी हो जाता है। शोधकार्य से जुड़े विद्यार्थियों को अक्सर पुराने जर्नल्स में मौजूद आँकड़ों इस्तेमाल करना पड़ता था। इसका असर परिणाम पर पड़ता रहा है। जो कहीं न कहीं शोध के उद्देश्य को ठेस पहुँचाता है। इसी को देखते हुए कैम्ब्रिज, इम्राल्ड, वायली, स्प्रिंगर, सेज समेत कई पब्लिकेशन के जर्नल और ई-बुक्स शामिल होंगे। सयाजीराव गायकवाड़ पुस्तकालय के प्रोफेसर इंचार्ज प्रो० आरएस दुबे के अनुसार इस बार साइंस के अलावा दूसरी उपेक्षित धाराओं पर अधिक जोर दिया गया है। इसके लिए विभागों के अध्यापकों से सम्पर्क कर उनसे भी जर्नल सम्बन्धी सूची माँगी गई थी। इन्हें ध्यान में रखकर ही विभिन्न प्रकाशनों के पत्रिकाओं और ई-बुक्स की उपलब्धता सुनिश्चित की जा रही है। जल्द ही इन जर्नल्स को साइट पर उपलब्ध करा दिया जाएगा। इसे डाउनलोड करने के लिए विश्वविद्यालय से अनुमति लेनी होगी।

खुलेंगे नए आईआईटी, आईआईएम और केंद्रीय विश्वविद्यालय

केन्द्र सरकार ने ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत देश में चार नए आईआईटी (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी) और छह नए आईआईएम (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट) खोलने का निर्णय किया है। इसके अलावा 14 विश्वस्तरीय विश्वविद्यालय खोलने का भी प्रस्ताव है। नए आईआईटी उड़ीसा, मध्य प्रदेश (इंदौर), गुजरात और पंजाब में खोले जाएंगे, जबकि आईआईएम की स्थापना झारखंड, छत्तीसगढ़ (रायपुर), उत्तराखंड एवं तमिलनाडु में की जाएगी। केंद्र सरकार वर्ष 2008-09 के आम बजट में पहले ही बिहार, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश एवं आंध्र प्रदेश में चार नए आईआईटी तथा मेघालय के शिलांग में एक आईआईएम खोलने की घोषणा कर चुकी है। जिन स्थानों पर 14 विश्वस्तरीय विश्वविद्यालय खोलने का प्रस्ताव है, उनके नाम हैं : पुणे (महाराष्ट्र), कोलकाता (पश्चिम बंगाल), जयपुर (राजस्थान), पटना (बिहार), भोपाल (मध्य प्रदेश), ग्रेटर नोएडा (उत्तर प्रदेश), अमृतसर (पंजाब), गुवाहाटी (असम), कोयम्बटूर (तमिलनाडु), मैसूर (कनार्टक), विशाखापत्तनम (आंध्र प्रदेश), गांधीनगर (गुजरात), कोच्चि (केरल) और भुवनेश्वर (उड़ीसा)। इन 14 के अलावा 16 राज्यों में एक नया केंद्रीय विश्वविद्यालय खोलने का भी निर्णय लिया गया है। ये राज्य हैं : बिहार, झारखंड, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, गुजरात, राजस्थान एवं गोवा। इनमें से तीन राज्य ऐसे हैं, जहाँ मौजूदा राज्य स्तरीय विश्वविद्यालयों को केंद्रीय विश्वविद्यालय का दर्जा दिया जाएगा। इनके नाम हैं—डॉ० हरिसिंह गौड़ विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.), गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छत्तीसगढ़) तथा गोवा विश्वविद्यालय (गोवा)। **बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय (बीएचयू) के प्रौद्योगिकी संस्थान को भी आईआईटी का दर्जा देने का निर्णय लिया गया है।**

सम्मान-पुरस्कार

प्रो. शर्मा को मूर्ति देवी पुरस्कार

वाराणसी। संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो. राममूर्ति शर्मा को भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा मूर्ति देवी पुरस्कार उनकी कृति 'भारतीय दर्शन की चिंतनधारा' पर मिला है। प्रो. शर्मा संस्कृत विश्वविद्यालय में 24 अप्रैल 1999 से 24 अप्रैल 2002 तक कुलपति रह चुके हैं।

जाने कब मुंबई छोड़कर लौटना पड़े

यूं तो सभी बड़ी हस्तियां कई-कई जगह अपने आशियाने बनाकर रखती हैं लेकिन प्रख्यात भजन गायक अनूप जलोटा ने जब सार्वजनिक तौर पर लखनऊ में फिर से घर ले लेने का खुलासा किया तो महाराष्ट्र के उपमुख्यमंत्री आरआर पाटिल को इसी समारोह में आश्वासन देना पड़ा कि हम देश के संविधान के अनुसार महाराष्ट्र में रहनेवाले हर व्यक्ति की सुरक्षा की जिम्मेदारी लेते हैं। जो भी संविधान की इस भावना को ठेस पहुँचाने की कोशिश करेगा, उसे बख्शा नहीं जाएगा।

पिछले दिनों यह अवसर था **महाराष्ट्र राज्य हिन्दी साहित्य अकादमी के पुरस्कार वितरण समारोह का।** इसमें उपमुख्यमंत्री मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे तो अनूप जलोटा पुरस्कार पाने वाले एक सदस्य के रूप में। पाटिल के हाथों पुरस्कार ग्रहण करने के बाद समारोह में जलोटा ने कहा कि मैं 1973 ई० में लखनऊ से यहाँ आया था। इस महानगर ने ही हमें सम्मान और धन प्रदान किया है लेकिन अब हमने फिर से लखनऊ में एक घर ले लिया है क्योंकि न जाने कब मुंबई छोड़कर पुनः लखनऊ जाना पड़े। जलोटा ने गृहमंत्रालय के प्रभारी उपमुख्यमंत्री की उपस्थिति का लाभ लेते हुए हाल की राजनीतिक व हिंसक घटनाओं के संदर्भ में मुंबई के समस्त उत्तर भारतीयों की भावनाएं व्यक्त कर दीं। साथ ही वह एक और व्यंग्य करने से पीछे नहीं रहे।

मातृश्री अवार्ड की घोषणा

इस साल के मातृश्री अवार्ड की घोषणा कर दी गई है। अवार्ड के लिए प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया के **मनोज सीजी**, पीटाआई भाषा की **कनक** और फोटोग्राफर **मानवेंद्र वशिष्ठ** समेत 24 पत्रकारों को चुना गया है। चक दे इण्डिया सर्वश्रेष्ठ फिल्म घोषित की गई है। मातृश्री मीडिया अवार्ड्स समारोह कमेटी-2008 के मुताबिक सम्मानित होने वाले पत्रकारों में नवभारत टाइम्स से प्रशांत सोनी, दैनिक हिन्दुस्तान से शशिकांत, पंजाब केसरी से शोभन सिंह, दैनिक जागरण से अरशद फरीदी, जनसत्ता से प्रियरंजन, राष्ट्रीय सहारा से रत्नेश मिश्रा भी शामिल हैं। अवार्ड चार मई को प्रदान किए जाएँगे।

मेजर रतन जांगिड़ को प्रतिष्ठित रांगेय राघव पुरस्कार

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर ने वर्ष 2007-08 का प्रतिष्ठित '**रांगेय राघव पुरस्कार**' सुपरिचित कथाकार-उपन्यासकार **मेजर रतन जांगिड़** को उनके चर्चित उपन्यास 'युद्धबन्दी' के लिए प्रदान किया है। 'युद्धबन्दी' उपन्यास द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान युद्धबन्दियों पर घोर अत्याचार एवं क्रूरतापूर्ण व्यवहार की पृष्ठभूमि पर है। हिन्दी साहित्य में युद्धबन्दियों पर यह अकेला उपन्यास है।

उमेश डोभाल स्मृति सम्मान समारोह

श्रीनगर (गढ़वाल) में 25 मार्च 2008 को आयोजित 'उमेश डोभाल स्मृति सम्मान समारोह' में उत्तराखण्ड के प्रमुख शिक्षाविद **डॉ० रामसिंह** को साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करने के लिए '**उमेश डोभाल स्मृति सम्मान**' प्रदान किया गया।

कमलेश्वर : वर्तमान साहित्य कथा पुरस्कार समारोह

'**वर्तमान साहित्य : कमलेश्वर कथा पुरस्कार**' के रूप में ग्यारह हजार रुपये का चेक श्रीमती गायत्री कमलेश्वर के हाथों से ग्रहण करते हुए पुरस्कृत लेखक **सत्यदेव त्रिपाठी** ने कहा कि ''उनकी पहचान रंग-समीक्षक, थियेटर-विशेषज्ञ तथा समीक्षक-आलोचक की रही है। यही कारण है कि जब उन्होंने कहानी लिखना आरम्भ किया तो सम्पादकों ने उनकी कहानियाँ स्वीकार नहीं कीं। उनका कम लिखने का कारण है, उनके भीतर बैठे आलोचक का बहुत अधिक कठोर होना, जिसके कारण अधिकांश कहानियाँ मानस पटल पर लिखी रह जाती हैं और कागज़ पर नहीं उतर पाती हैं।'' सत्यदेव त्रिपाठी को उनकी कहानी 'ठाकुरजी बनाम ठाकुर साहब' के लिए पुरस्कृत किया गया।

समारोह की अध्यक्षता करते हुए प्रसिद्ध उपन्यासकार और 'वर्तमान साहित्य' के संस्थापक-सम्पादक विभूतिनारायण राय ने कमलेश्वर की सम्पादकीय सक्रियता की चर्चा की तथा उन्हें पत्रकारिता और साहित्य में समान रूप से विशिष्ट व्यक्तित्व बताया। उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि उनका पूरा जीवन समाज में लगातार बढ़ रही साम्प्रदायिकता के विरुद्ध संघर्ष में बीता और उनकी लेखनी साहसपूर्वक हर प्रकार के धार्मिक कट्टरवाद का विरोध करती रही।

डॉ० गणेशदत्त सम्मानित

सीतापुर। 'हिन्दी-सभा' के 64वें वार्षिकोत्सव में जबलपुर की कादम्बरी संस्था के अध्यक्ष डॉ० गार्गीशरण मिश्र तथा महामंत्री आचार्य भगवत दुबे के द्वारा 'हिन्दी-सभा' के अध्यक्ष एवं आर०एम०पी० स्नातकोत्तर महाविद्यालय के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष **डॉ० गणेशदत्त सारस्वत** को सम्मानित किया गया। उन्हें यह सम्मान निबन्ध के क्षेत्र में उनके उल्लेखनीय योगदान के लिए दिया गया। उनका 'निकष' निबन्ध-संग्रह निर्णायकों द्वारा सर्वोत्तम घोषित किया गया।

'खुरदुरी हथेलियाँ' को केदार सम्मान

समकालीन हिन्दी कविता की महत्त्वपूर्ण कवयित्री **अनामिका** को उनके कविता संकलन 'खुरदुरी हथेलियाँ' के लिए वर्ष 2007 का '**केदार सम्मान**' देने का निर्णय लिया गया है। निर्णय की प्रशस्ति में लिखा गया है कि ''अनामिका के इस काव्य-संग्रह की कविताओं में भारतीय समाज सभ्यता और जनजीवन में जो हो रहा है और होने की प्रक्रिया में जो कुछ खो रहा है उसकी प्रभावी पहचान और अभिव्यक्ति है। यही नहीं इन कविताओं में होने और खोने के बीच के सम्बन्ध का ऐसा बोध है जो पाठकों को भी संवेदनशील और सजग बनाता है। इन कविताओं को एक सतर्क स्त्री दृष्टि की संवेदनशीलता आकर्षक बनाती है और स्त्री भाषा की सामाजिकता पाठकों को नये किस्म की सामाजिक संवेदनशीलता सौंपती है।''

डॉ० उदयप्रताप सिंह, 'बुधसिंह बापना' पुरस्कार से सम्मानित

अखिल भा०सा०प०, कोटा (राजस्थान) प्रतिवर्ष बुधसिंह बापना की स्मृति में एक पुरस्कार की घोषणा करती है। इस वर्ष यह पुरस्कार वाराणसी के समालोचक **डॉ० उदयप्रताप सिंह** को दिया गया। डॉ० सिंह को यह सम्मान उनकी पुस्तक 'आलोचना की अपनी परम्परा' पर दिया गया। राजस्थानी पगड़ी, श्रीफल, प्रमाणपत्र तथा नकद राशि देकर डॉ० सिंह को सम्मानित किया गया। स्मरणीय है कि राजस्थान में यह प्रतिष्ठित सम्मान पेशे से वकील होते हुए भी उच्चकोटि के साहित्यकार स्व० बुध सिंह बापना की स्मृति में प्रदान किया जाता है।

अभिज्ञान शाकुन्तलम्

राष्ट्रीय प्रसारण हेतु वाराणसी दूरदर्शन द्वारा निर्मित संस्कृत धारावाहिक महाकवि कालिदास की रचना 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' को प्रथम तीन कृतियों के अन्तर्गत सम्मानित किया गया है। इस धारावाहिक का निर्देशन किया है डॉ० राजेन्द्र उपाध्याय ने। इसके अतिरिक्त वाराणसी दूरदर्शन द्वारा निर्मित साहित्य आधारित टेलीफिल्म 'मनु' (लेखक : विद्यासागर नौटियाल) एवं 'पीला गुलाब' (लेखक : लाभशंकर ठाकर) को भी पुरस्कृत किया गया।

इब्राहिम अलकाजी को 'जीवनकालीन उपलब्धि' पुरस्कार

कला, साहित्य, संगीत, नृत्य, रंगमंच, प्रदर्शन कला के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए 'जीवनकालीन उपलब्धि' के लिए दिल्ली सरकार द्वारा दिया जाने वाला सम्मान इस वर्ष इब्राहिम अलकाजी को दिया गया। मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने पद्मभूषण से अलंकृत अलकाजी को रंगमंच और कला क्षेत्र के लिए सम्मानित कर 11 लाख रुपए की राशि भेंट की।

किरण बेदी को 'ऐनीमैरी मेडीसन' पुरस्कार

भारतीय पुलिस सेवा से अवकाशप्राप्त **किरण बेदी** को जेल सुधार और मानवाधिकारों की रक्षा के क्षेत्र में किए गए प्रयासों के लिए '**ऐनीमैरी मेडीसन पुरस्कार**' से सम्मानित किया गया है। पुरस्कार में उन्हें पाँच हजार यूरो की नकद राशि प्रदान की गई है। बेदी का कहना है कि वह यह राशि आम लोगों की सहायता के लिए स्थापित अपनी वेबसाइट के नाम पर देंगी। किरण बेदी को यह पुरस्कार अंतरराष्ट्रीय स्वास्थ्य संगठन केआईएस बोर्ड ऑफ ट्रस्टी की ओर से दिया गया। विगत दिनों जर्मनी के म्यूनिख शहर में हुए एक समारोह में उन्हें इस पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

बलिया के प्रो. शुक्ल को अंतर्राष्ट्रीय सम्मान

वॉशिंगटन। बलिया जिले में जन्मे प्रो. जगदीश शुक्ल को अंतर्राष्ट्रीय मौसम विज्ञान संगठन के प्रतिष्ठित अवार्ड से सम्मानित किया गया है। उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से पीएचडी की और फिर अमेरिका चले गए। वे इस समय अमेरिका के जार्ज मेसन विश्वविद्यालय में मौसम विज्ञान के प्रोफेसर हैं। वाशिंगटन डीसी में आयोजित एक समारोह में उन्हें 52वाँ 'अंतर्राष्ट्रीय मौसम विज्ञान संगठन (आईएमओ) पुरस्कार' प्रदान किया गया। उन्हें यह पुरस्कार डब्ल्यूएमओ के अध्यक्ष डॉ० एलेक्जेंडर बेडरिस्की ने दिया। पुरस्कार के तहत स्वर्ण पदक, प्रशस्तिपत्र और नकद राशि दी जाती है। प्रो. शुक्ला को यह सम्मान मानसून पर उनके शोध व मौसम की भविष्यवाणी करने के लिए तैयार वैज्ञानिक मॉडल पर दिया गया है। मौसम विज्ञान के क्षेत्र में यह दुनिया का सबसे बड़ा सम्मान माना जाता है।

अपनी-अपनी पसंद

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ एक दिन मित्रमंडली में बैठे थे। अचानक वे बोले ''स्त्रियों को अच्छी चीज़ पहचानने की अक्ल नहीं होती। वे स्वर्ग की तलाश में होती हैं किंतु नरक खरीद लेती हैं। किंतु पुरुष का ध्यान हमेशा अच्छी वस्तु पर रहता है और वह उसे प्राप्त कर लेता है।''

इस पर शॉ की पत्नी बोलीं—''तुम्हारा ख्याल ठीक ही है, प्रिय! इसीलिए तुमने मुझे चुना और मैंने तुम्हें।''

शॉ का चेहरा उस समय देखने लायक था।

स्मृति-शेष

कवि श्रीरामस्वरूप लाल 'मंगल'

17 अप्रैल को हिन्दी व भोजपुरी के कवि श्री **रामस्वरूप लाल मंगलजी** का देहान्त हो गया।

मात्र वाचिक परम्परा से प्रसारित उनकी सरस रचनाएँ लाखों जनता को विमुग्ध कर चुकी हैं।

मिर्जापुर जिले के भाईपुर कलाँ अदलहाट के निवासी मंगलजी आज हमारे बीच नहीं हैं किन्तु उनकी रचनाएँ हमें उनकी स्मृति दिलाती रहेंगी—

जान पवलस ई कोई कबौ ना,
राउर अँखिया में का का भरल हौ।
जइसे नीलम के प्याली में अमृत,
ई सुदेशी सुरा या गरल हौ।
कबौं हमरो असर आह करि हैं,
कबौं सरकार के दिल पसीजि हैं।
बस इसी आसरे पर यह 'मंगल'
सब भिखारी से लमहर परल हौ।

❑ **डॉ० पवनकुमार शास्त्री**,
भारतीय ज्योतिष अनुसंधान संस्थान, वाराणसी

सी० क्लार्क नहीं रहे

आधुनिक युग में वैज्ञानिक परिकल्पनाओं के महान रचनाकार **सी० क्लार्क** (90 वर्ष) ने कोलम्बो में अन्तिम साँस ली। '2001 : ए स्पेस ओडिसी' (1968) उनका उपन्यास था, जिस पर उन्होंने फिल्म का निर्माण भी किया। प्रथम उपग्रह प्रक्षेपण के एक दशक पूर्व ही वह अपनी रचनाओं में इस तथ्य की परिकल्पना करनेवाले भविष्यद्रष्टा रचनाकार थे।

कुलपति प्रो० पंजाब सिंह की माँ का निधन

वाराणसी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. पंजाब सिंह की माता **अमरावती देवी** को 8 अप्रैल को हरिश्चंद्र घाट पर ज्येष्ठ पुत्र कमला सिंह ने मुखाग्नि दी। इस अवसर पर परिजन सहित प्रो. एके बनर्जी, डॉ० सत्यदेव सिंह, प्रो. आनंद मोहन, कुलसचिव एन सुंदरम्, वित्ताधिकारी पराग प्रकाश, विभिन्न विभागों के अध्यक्ष और संकाय प्रमुख उपस्थित थे।

सुभद्रा चौधरी का निधन

वाराणसी। संगीत के साथ ही खादी व सादगी भरा जीवन जीते हुए काशी हिंदू विश्वविद्यालय के संगीत एवं मंच कला संकाय की पूर्व संगीत विभागाध्यक्ष **प्रो. सुभद्रा चौधरी** ने दुनिया को अलविदा कह दिया। अस्वस्थता के कारण गत वर्ष उनकी पुत्री श्रीमती प्रज्ञा उन्हें इलाज के लिए दिल्ली ले गईं थीं जहाँ उनका निधन हो गया। उनकी उम्र लगभग 75 वर्ष थी। लोदी रोडस्थित श्मशान पर मुखाग्नि उनके मानस पुत्र वाराणसी के चेतन उपाध्याय ने दी। प्रो. चौधरी का जीवन-ध्येय ही संगीत था। उन्होंने

भोजपुरी साहित्याकाश का नक्षत्र टूटा

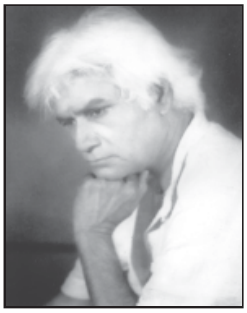

चन्द्रशेखर मिश्र

(जन्म : 30 जुलाई 1930, मृत्यु : 17 अप्रैल, 2008)

वाराणसी। अपनी ओजपूर्ण रचनाओं से कविता मंचों को नया आयाम देने और लेखन से भोजपुरी साहित्य का भण्डार भरनेवाले **पं० चन्द्रशेखर मिश्र** ने लम्बी अस्वस्थता के बीच जिन्दगी से जद्दोजहद करते हुए 17 अप्रैल को अन्तिम साँस ली। वह 80 वर्ष के थे। भोजपुरी साहित्य के पुरोधा पं० मिश्र ताउम्र भोजपुरी साहित्य के सृजन व श्रीवृद्धि में लगे रहे। उन्होंने भरसक न सिर्फ भोजपुरी को आत्मसात किया बल्कि उसे स्थापित करने में भी एड़ी चोटी एक कर दी। जिन्दगी के 79 वसंत देखनेवाले मिश्र ने न सिर्फ भोजपुरी को जिया बल्कि उसका परचम भी फहराया। भोजपुरी में जहाँ श्रृंगार की प्रधानता दिखायी देती है, वहीं पं० चन्द्रशेखर मिश्र ने भोजपुरी में वीररस की कविताएँ कीं। राष्ट्रीयता का उभार, भाई-बहन के प्रेम को उन्होंने अपने साहित्य में प्रमुखता से स्थान दिया। उनके लेखन का उद्देश्य था कि व्यक्ति अपने राष्ट्र की शक्ति को पहचाने। राष्ट्र के पुनरुत्थान के लिए परिश्रम करे। राष्ट्र का उत्थान तभी होता है जब व्यक्ति का उत्थान होता है। यही साहित्य का उद्देश्य है। उन्होंने भोजपुरी में गीतों की रचना की। कई बार राज्य सरकार के पुरस्कारों से नवाजे गए। भोजपुरी में लेखन के लिए उनको मारीशस में विश्व सेतु सम्मान, अवंतिबाई, मंगलाप्रसाद आदि कई पुरस्कार मिले। उन्होंने भोजपुरी में अनेक खण्डकाव्य व महाकाव्यों की रचना की। उनका भोजपुरी में पहला महाकाव्य 'कुँअर सिंह' है। उनके प्रमुख काव्य-संग्रह में द्रौपदी, भीषम बाना, सीता, लोरिक चंद्र, गाते रूपक, देश के सच्चे सपूत, पहला सिपाही, आल्हा उदल, जागृत भारत, धीर, पुंडरिक, रौशन आरा आदि हैं।

पं० चन्द्रशेखर मिश्र का जन्म मीरजापुर जिले के मिश्रधाप गाँव में सन् 1930 में हुआ था। बचपन में ही वह काशी आए और स्थायी तौर पर यहीं बस गए। अन्तिम समय में भी वह साहित्य सृजन में लगे रहे। इन दिनों वे 'मेरी काव्य यात्रा' व 'लवकुश खण्ड काव्य' लिखने में व्यस्त थे। चार पुत्र व चार पुत्रियों के पिता चंद्रशेखर मिश्र भोजपुरी साहित्य में वीर रस के प्रतिष्ठित कवि के रूप में याद किये जाएँगे।

श्रद्धांजलियाँ

चन्द्रशेखर मिश्र वीर और श्रृंगार रस के सिद्ध कवि थे। भोजपुरी में प्रबन्ध काव्य की परम्परा उन्होंने कायम रखी। कवित्त और सवैया के पाठ की परम्परा को भी जीवंत बनाए रखा। आज 1857 के क्रान्ति की 150वीं वर्षगाँठ मनाई जा रही है। पर कुँवर सिंह महाकाव्य की रचना करनेवाले कवि को राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित किया जाना चाहिए था। शंभूनाथ सिंह के बाद 1950 में कवि सम्मेलनों की परम्परा टूटनेवाली थी लेकिन उन्होंने कायम रखा। ❑ **डॉ० काशीनाथ सिंह**

■ ■ ■

चन्द्रशेखर मिश्र छह दशक से वाराणसी के सामाजिक, साहित्यिक व सांस्कृतिक जीवन के अनिवार्य अंग के रूप में सबसे सक्रिय और जीवंत बने रहे।

उन्होंने भोजपुरी संस्कृति, सभ्यता, रीति-रिवाज, परम्पराओं व जीवन शैली को अत्यन्त यथार्थ और जीवंत रूप में अपनी रचनाओं में जैसी अभिव्यक्ति दी, वह दुर्लभ है। ऐसी कृतियों के रचनाकार अक्षरों की दुनिया में अमर रहते हैं और आनेवाली पीढ़ियाँ युगों तक उनको श्रद्धा सहित याद करती हैं। ❑ **श्रीकृष्ण तिवारी**

वह ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने राष्ट्रीय चरित्रों को अपनी मेधा से नई पहचान दी। भोजपुरी साहित्य के भीष्म पितामह थे। ठोस जमीन पर खड़े होकर उन्होंने रचना की और भोजपुरी साहित्य का नया प्रतिमान गढ़ा। महाभारत के चरित्रों को उनकी अस्मिता एवं संस्कृति को अपनी कविताओं में नई पहचान दी।

❑ **डॉ० गया सिंह**

■ ■ ■

भोजपुरी काव्य साहित्य को लोकप्रिय बनाया। उसे स्वतंत्रता संग्राम से जोड़कर नया रूपक और आयाम दिया। श्रेष्ठ साहित्य की रचना करके इसका मान बढ़ाया। उनके निधन से भोजपुरी में बेहतर साहित्य की कमी होगी।

❑ **प्रो० सुरेन्द्रप्रताप सिंह**

■ ■ ■

भोजपुरी बोली की उत्तम रचनाशीलता से चन्द्रशेखरजी ने प्रबुद्धजन और आमजन को करीब ला खड़ा किया। भोजपुरी में विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में उनकी रचनाएँ सम्मानपूर्वक स्वीकृत हुईं। मंचों के माध्यम से भोजपुरी की रचनात्मक शक्ति को उन्होंने जनमानस तक पहुँचाया। ❑ **डॉ० वाचस्पति**

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में संगीतमार्तण्ड पं. ओंकार नाथ ठाकुर के सान्निध्य में संगीत की साधना की तथा आप संगीत-शास्त्र में पीएचडी की उपाधि पाने वाली काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की पहली शोधार्थी थीं।

के०टी० मोहम्मद का निधन

मलयालम भाषा के नाट्य लेखक/प्रयोक्ता **के०टी० मोहम्मद** (79 वर्ष) का लम्बी बीमारी के बाद निधन हो गया। वे मुस्लिम समाज में सुधारवादी आन्दोलन के पैरोकार थे। उन्होंने अपने नाटकों के माध्यम से मुस्लिम-समाज की अंध मान्यताओं-रूढ़ियों पर प्रहार किया।

पाठकों के पत्र

'भारतीय वाङ्मय' का फरवरी-मार्च 2008 अंक मिला। हिन्धी साहित्य जगत की गतिविधियों की वैविध्यपूर्ण जानकारियों से समृद्ध यह अंक अपने पूर्व के कलेवर के अनुरूप ही स्तरीय बन पड़ा है। इसके लिए कोटिश: धन्यवाद। लक्ष्मीधर मालवीय का लेख 'साखी हिन्दी' काफी विचारोत्तेजक है, हिन्दीवालों को हिन्दी की दशा सुधारने के लिए किस तरह अपने स्वरूप में बदलाव लाने की जरूरत है उनका यह सुझाव विचारणीय है ताकि वह युगानुरूप मानसिकता, माँग और रुचि के अनुकूल होकर भी युग की रुचि और माँग के परिष्कार में भी सक्षम बन सकें, उनके शब्द ताकत बन सकें। यह अंक पूर्व की तरह ही पठनीय, ज्ञानवर्द्धक, संग्रहणीय और सुन्दर है जो अपने इस कलेवर में हम पाठकों को अपने सुन्दर भविष्य के लिए भी आश्वस्त करता है।

— कुसुम राय, वर्द्धमान (पश्चिम बंगाल)

'भारतीय वाङ्मय' का नवीनतम अंक (फरवरी-मार्च 08) प्राप्त हुआ। साभार धन्यवाद। पत्रिका को आद्यंत मनोयोग से पढ़ने पर लगा, निस्संदेह 'भारतीय वाङ्मय' साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की समृद्ध एवं आदर्श पत्रिका है। प्रस्तुत अंक में कई ऐसे समाचार व जानकारियाँ हैं जो अन्य पत्रिकाओं में उपलब्ध नहीं होतीं। देश-विदेश के समसामयिक समाचारों से लैस प्रस्तुत अंक में दु:खद और सुखद दोनों प्रकार के समाचार मौजूद हैं। डॉ० विवेकी राय तथा डॉ० मंगलमूर्ति के आलेखों से पत्रिका के आद्य संस्थापक-सम्पादक पुरुषोत्तमदासजी मोदी के निधन का समाचार पढ़कर मन भारी हो गया। उनकी अधूरी महत्त्वाकांक्षाएँ (निश्चय ही साहित्यिक व सांस्कृतिक) परिपूर्ण होने की हम साहित्यसेवियों की उम्मीदें निकट भविष्य में फलीभूत होंगी। 'अत्र-तत्र-सर्वत्र' तथा 'सम्मान-पुरस्कार' जैसे स्तम्भों में प्रकाशित समाचार हमारी जानकारी में इज़ाफा करते हैं और सुखद अनुभूति भी कराते हैं। 'स्मृतिशेष' स्तम्भ में विभिन्न भाषा-साहित्य के महारथियों के निधन के समाचार आघातजनक हैं। 'संगोष्ठी-लोकार्पण' में संकलित समाचार सुखद-महत्त्वपूर्ण हैं। 'पुस्तक-परिचय' में हिन्दी के नये ग्रन्थों का समीक्षात्मक परिचय बड़ा ही उत्साहवर्धक, रोचक और प्रेरणाप्रद है। 'भारतीय वाङ्मय' निश्चय ही आपके सम्पादकीय कौशल का प्रत्यक्ष प्रमाण है। अपने साफ-सुथरेपन व निहायत सादगी के बावजूद आज नौ वर्षों के बाद भी 'भारतीय वाङ्मय' पत्रिकाओं की भीड़ में अलग, अनूठी और बेमिसाल है। यह तथ्य भी पाठकों के प्रतिभावों से साफ उजागर होता है।

इस सादगी पे कौन न मर जाय ऐ खुदा,
लड़ते हैं मगर हाथ में तलवार भी नहीं।

—प्रो० भगवानदास जैन, अहमदाबाद

'भारतीय वाङ्मय' का अप्रैल, 2008 अंक मिला। आपका सम्पादकीय अग्रलेख अत्यन्त मार्मिक है। पूज्य मोदीजी के निधन पर मन में यह आशंका होने लगी थी कि पता नहीं 'भारतीय वाङ्मय' का क्या होगा? लेकिन आपके दृढ़ निश्चय और धारदार लेखनी ने उक्त आशंका को सर्वथा निर्मूल कर दिया है।

'भारतीय वाङ्मय' केवल प्रकाशित पुस्तकों की विवरणी भर नहीं है, उससे समग्र 'हिन्दी-भारत' का परिचय भी मिलता है। मैं आपके सत्प्रयास की सफलता चाहता हूँ।

—प्रो० भगवानशरण भारद्वाज, बरेली

'भारतीय वाङ्मय' लगातार नियमित रूप से प्राप्त हो रहा है। विभिन्न प्रकाशनों तथा साहित्यिक समाचारों की सूचना इससे मिलती ही है लेकिन कभी-कभी गम्भीर लेख भी पढ़ने को मिल जाते हैं। फरवरी-मार्च 2008 अंक में लक्ष्मीधर मालवीयजी का लेख 'साखी हिन्दी की' ऐसा ही है। इसके दूसरे भाग की प्रतीक्षा है।

—राजेश उत्साही, भोपाल

अप्रैल 2008 का 'वाङ्मय' मिला; आभार!

लगता नहीं कि मोदीजी के पश्चात् भी 'वाङ्मय' का स्तर ठीक नहीं रहा अपितु मैं तो कहना चाहूँगा कि प्रस्तुति, रूप-सज्जा एवं सामग्री-चयन में यह किसी भी भाँति क्षीण नहीं है। तुलसीदासजी ने सटीक ही लिखा—

बाढ़े पूत पिता कै करमा

सम्पूर्ण हिन्दी-जगत् को, आपके 3/4 अंकों से ही आश्वासन हो गया है कि 'वाङ्मय' जीवित ही नहीं अपितु और भी ऊँचाइयों पर जाएगा। इसी भाँति आपके शीर्षस्थ प्रकाशन-गृह के सम्बन्ध में भी सभी निश्चिन्त हैं।— **अम्बु शर्मा,** कोलकाता

'भारतीय वाङ्मय' का बराबर अवलोकन करता रहा हूँ। आपने 'विश्वविद्यालय प्रकाशन' और 'भारतीय वाङ्मय' आदि को भली-भाँति तन-मन और पूरी लगन से सम्भाला है। इसके लिए मैं आपकी सराहना करता हूँ, प्रशंसा करता हूँ और आपको धन्यवाद भी देता हूँ।

— रामेश्वरदास गुप्त, नई दिल्ली

'भारतीय वाङ्मय' के फरवरी-मार्च 08 के अंक में 42 वर्ष जापान में रहने वाले श्री लक्ष्मीधर मालवीय का लेख बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसी अंक में डॉ० विवेकी राय के उद्‌गार 'एक केन्द्रीय व्यक्ति का अभाव' शीर्षक के अन्तर्गत काफी प्रभावशाली है। कर्मवीर पुरुषोत्तमदासजी मोदी का अभाव हमेशा खलेगा किन्तु आपने उनकी विरासत को चुस्त-दुरुस्त करने का बीड़ा उठा लिया है। आपको 'भारतीय वाङ्मय' की निरंतरता के लिए बधाई। **—अखिल विनय,** मुम्बई

'भारतीय वाङ्मय' का अप्रैल अंक प्राप्त। हर मास पत्रिका आ जाती है। नये प्रकाशनों की सूचना पाकर आभारी होता हूँ।

—डॉ० शंकरमोहन झा, देवघर (झारखण्ड)

'भारतीय वाङ्मय' का फरवरी-मार्च 08 का अंक प्राप्त हुआ। पिछले नौ वर्षों से आप पत्रिका पूरी निष्ठा के साथ निकाल रहे हैं। जानकारी से भरा अंक मेरे पास काफी देर से पहुँचा। मैं इससे पहले क्यों नहीं जुड़ पाया इसका खेद भी रहा। इसमें प्रकाशित लेख काफी स्तरीय हैं। अत्र-तत्र-सर्वत्र से मुझ जैसे अहिन्दी प्रदेश के व्यक्ति को साहित्य-जगत की काफी जानकारी प्राप्त हुई। महाराष्ट्र के सुदूर प्रदेश में बैठे मुझ जैसे व्यक्ति को सम्पूर्ण हिन्दी प्रदेश में जो साहित्यिक घटनाएँ हो रही हैं, उसकी विस्तृत जानकारी मिली। पर सारी जानकारी इकट्ठा करने हेतु आपको काफी परिश्रम उठाना पड़ता होगा। आपके परिश्रम के फलस्वरूप हम लोग न केवल लाभान्वित होते हैं अपितु जानकारी से समद्ध भी हुए हैं। श्री लक्ष्मीधर मालवीय का लेख काफी महत्त्वपूर्ण लगा।

—प्रो० सूर्यनारायण रणसूभे 'निकष', लातूर

समवेदना के पत्र

श्री पुरुषोत्तमदास मोदी का व्यक्तित्व बहुआयामी था। पुस्तकों का प्रकाशन उनके अध्यवसाय का प्रमुख साधन भले रहा हो, परन्तु इससे न तो उनका साहित्य-प्रेम कम हुआ और न सर्जनात्मक प्रतिभा ही मंद हुई। अनेक समाजसेवी संस्थाओं के वे जनक, प्रेरक, संरक्षक और प्रबन्धक थे। वाराणसी में होनेवाले साहित्यिक आयोजनों की सफलता में उनकी भूमिका सदा महत्त्वपूर्ण रहती थी। देश-विदेश के जाने-माने विद्वानों, कवियों और साहित्यसेवियों से उनकी गहरी आत्मीयता थी। स्वयं भी अच्छे लेखक थे। हिन्दी साहित्य को बनते-सँवरते उन्होंने देखा था। उनके दिवंगत हो जाने से जो अपूरणीय क्षति साहित्य जगत् को हुई है, उसकी भरपाई शायद ही सम्भव हो।

❑ **त्रिभुवन ओझा,** जमशेदपुर

संगोष्ठी/लोकार्पण

महादेवी वर्मा जन्म-शताब्दी समारोह

वाराणसी। यूपी कालेज में कवयित्री महादेवी वर्मा जन्म-शताब्दी-समारोह का आयोजन किया गया। इस मौके पर दो सत्रों में हुई संगोष्ठी में महादेवी वर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व पर विस्तार से चर्चा हुई।

समारम्भ सत्र के मुख्य अतिथि व इलाहाबाद विवि में हिंदी विभाग के पूर्व अध्यक्ष **प्रो. राजेन्द्र कुमार** ने कहा कि जीवन में केवल शब्दकर्म या कविकर्म ही महत्त्वपूर्ण नहीं है। बल्कि साहित्यिक कर्मों के साथ-साथ महादेवीजी के समान भौतिक जगत में व्याप्त दु:खों से त्राण प्राप्त करने के लिए भी प्रयत्नशील रहना चाहिए। अध्यक्षीय उद्‌बोधन में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष **प्रो. कुमार पंकज** ने कहा कि महादेवी वर्मा जैसे व्यक्तित्व को समझने के लिए अति सजगता की आवश्यकता है। इसी सत्र में **डॉ० गोरखनाथ पांडेय** ने कहा कि साहित्य में यदि स्त्री नहीं होगी तो साहित्य की तस्वीर अधूरी रहेगी। **डॉ० वंदना झा** ने कहा कि वेदना से परिपूरित महादेवीजी के काव्य को व्याख्यायित करना असंभव है। **डॉ० रामाज्ञा शशिधर** ने बाजारवाद से आधुनिक स्त्री-जगत पर पड़नेवाले दुष्प्रभावों को रेखांकित किया। पूर्व आयुक्त **डॉ० राजेन्द्र प्रसाद पांडेय** ने कहा कि महादेवीजी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को समझने के लिए न केवल उनकी कविताओं बल्कि उनके संस्मरणों और निबंधों का अध्ययन आवश्यक है। संचालन डॉ० रामसुधार सिंह ने, धन्यवाद ज्ञापन मूलचंद सोनकर ने किया। दूसरे सत्र के मुख्य वक्ता डॉ० पी०एन० सिंह ने कहा कि महादेवी वर्मा को अपने समकालीनों के बीच में रखकर सोचा जाय तो उनमें अनुभूति की तीव्रता और गहनता तो है, लेकिन उसका विस्तार नहीं है। **डॉ० नीरजा माधव** ने कहा कि महादेवी वर्मा का दु:ख मानव मात्र की नियति नहीं है, बल्कि परमानंद-प्राप्ति का प्रारंभ है। **डॉ० श्रीप्रकाश शुक्ल** ने कहा कि महादेवी जी मूलत: और अन्तत: कवयित्री ही थी। इस अवसर पर डॉ० अनूप वशिष्ठ ने भी विचार व्यक्त किए। अध्यक्षीय संबोधन में **डॉ० विश्वनाथ प्रसाद** ने कहा कि महादेवीजी के साहित्य में एक ओर भाव-प्रवणता और अद्वैतवादी चिंतन है तो दूसरी ओर समाज चिंतन भी दिखता है। संचालन डॉ० संजय श्रीवास्तव और धन्यवाद ज्ञापन डॉ० संगीता श्रीवास्तव ने किया। इस मौके पर डॉ० महेन्द्र प्रताप, डॉ० वेणी माधव, डॉ० रमाकांत मिश्र, डॉ० सदानंद सिंह, फादर एम संतियागो, डॉ० सत्येन्द्र सिंह, डॉ० बृजबाला सिंह आदि उपस्थित थे।

अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति का 14वाँ हिन्दी अधिवेशन

वैश्वीकरण के युग में हिन्दी

अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन डीसी में अंतरराष्ट्रीय हिन्दी समिति के चौदहवें हिन्दी अधिवेशन का आयोजन 8 अप्रैल को हुआ। अधिवेशन का विषय था—वैश्वीकरण के युग में हिन्दी समिति के कार्यकर्ता अमेरिका के भिन्न-भिन्न नगरों में बसे हुए हैं। यहाँ पर इस अधिवेशन के उल्लेख का मकसद भारतीयों को विश्व मंच पर हो रही हिन्दी की हलचल से परिचित कराना था। भारत या अन्य देशों में परिस्थिति-परिवेश भिन्न हो सकता है, लेकिन बात तो हिन्दी की हो रही है, काम तो हिन्दी के लिए हो रहा है।

अमेरिका में हिन्दी की प्रमुख संस्थाओं में एक है अंतरराष्ट्रीय हिन्दी समिति। समिति की स्थापना 28 वर्ष पूर्व वाशिंगटन डीसी में हिन्दी मनीषी डॉ० कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह ने की थी। उन्होंने अपने पुत्र डॉ० रवि प्रकाश सिंह को अमेरिकी भूमि पर हिन्दी का ध्वज फहराने के लिए प्रेरित किया था। 28 वर्ष पश्चात हिन्दी का ध्वज शिखर पर पहुँच रहा है। समिति की मुख्य पत्रिका 'विश्वा' का विगत 28 वर्षों से अनवरत प्रकाशन हो रहा है। हस्तलेखन से लेकर सज्जापूर्ण छपाई तक इस पत्रिका में लंबी यात्रा तय की है। प्रतिवर्ष समिति द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन आकर्षण का केन्द्र रहे हैं।

भारतीय हिन्दी का आदर करें या न करें, भारतीय प्रशासन हिन्दी की कितनी ही उपेक्षा करें, परन्तु हिन्दी तो विश्व मंच पर आसीन हो रही है। इसका प्रमाण 2007 में आयोजित विश्व हिन्दी सम्मेलन था। विश्व के अलग-अलग देशों से जुटे हिन्दी प्रेमी लेखक, शिक्षक एवं विद्वानों ने हिन्दी की बेहतरी के लिए विचार-विमर्श किया। अमेरिका में भारतीय समाज अभी युवावस्था में ही है—कुल 30-40 वर्ष पुराना है। अमेरिका में हिन्दी की गतिविधियाँ अभी किशोरावस्था में ही है।

वाशिंगटन में हुए अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति के 14वें अधिवेशन के दूसरे दिन कई प्रस्ताव पारित किये गये।

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति समान उद्देश्य वाली संस्थाओं एवं व्यक्तियों के साथ मिलकर भारत की राजभाषा हिन्दी को संयुक्त राष्ट्रसंघ में आधिकारिक भाषा के रूप में पहचान दिलाने हेतु कार्य करेगी। इसके लिए विशेष रणनीति बनायी गयी है। एक प्रस्ताव में कहा गया कि अमेरिका में अनेक स्थानों पर, उत्पादों, वस्तुओं के लेबल में सार्वजनिक स्थानों पर उद्‌घोषणाएँ अंग्रेजी के साथ चीनी व स्पेनिश भाषाओं में की जाती हैं। इसमें हिन्दी को भी शामिल किया जाना चाहिए।

एक अन्य प्रस्ताव में कहा गया कि अमेरिका में युवाओं में हिन्दी के प्रति रुझान पैदा कर आकर्षित करने एवं हिन्दी के प्रचार-प्रसार में युवाओं की सहयोगिता निर्धारित करने को अनेक स्तरों पर अलग-अलग आधार तैयार करने के प्रयास किये जायेंगे। इसी क्रम में अधिवेशन में छोटे बच्चों के लिए हिन्दी का पाठ्यक्रम तैयार कर पुस्तकें प्रकाशित करने का निर्णय लिया गया। लेखिका रेणु राजवंशी गुप्ता (ओहायो) के संयोजन में एक शिक्षा समिति का गठन हुआ, जो प्राथमिक कक्षा के बच्चों को हिन्दी सिखाने के लिए पुस्तकें तैयार करेगी।

अधिवेशन के मुख्य संयोजक डॉ० सतीश मिश्र का यह ईमानदार प्रयास है कि अमेरिका में बिखरी हुई हिन्दी की शक्ति एकत्रित हो। इस अधिवेशन में अपने खर्चे पर अमेरिका के सुदूर नगरों से हिन्दीसेवी वाशिंगटन डीसी में मिले। अमेरिका में हिन्दी की स्थिति कैसे सुदृढ़ हो, इस पर विचार-विमर्श हुआ। उद्‌घाटन सत्र में अमेरिका के हिन्दी विद्वानों का सम्मान किया गया। सम्मेलन में हिन्दी साहित्य, अमेरिका में हिन्दी शिक्षण की दशा एवं दिशा आदि विषयों पर विचारगोष्ठी का आयोजन हुआ। इंटरनेट पर हिन्दी की संभावनाएँ, मीडिया युग में हिन्दी के स्थान पर भी विस्तृत विचार-विमर्श हुआ। आशा है कि इससे भविष्य के लिए दिशा तथा ठोस कार्यप्रणाली निर्धारित की जा सकेगी। अमेरिका में हिन्दी शिक्षण की स्थिति अच्छी नहीं है। बच्चों को टुकड़ों-टुकड़ों में हिन्दी पढ़ाई जाती है। विश्वविद्यालयों में हिन्दी का दखल नगण्य है। दो-तीन नगरों में ही यह सुविधा उपलब्ध है। हाई स्कूल में हिन्दी शिक्षण की सुविधा उपलब्ध करना भारतीयों का प्रमुख कर्तव्य है।

> जब शोध करनेवाले हिन्दी में बोलना और लिखना-पढ़ना पसन्द नहीं करते तो शेष लोगों से क्या उम्मीद की जा सकती है? भारतवंशी, भारतीय एवं प्रवासी भारतीय हिन्दी बोलने में हिचकिचाते हैं। समाचार और साक्षात्कार में सर्वत्र अंग्रेजी का बोलबाला है। विदेश में लिखी हुई हिन्दी देखने में हमारी आँखें तरस जाती हैं।
>
> अमेरिका में भारतीय दुकानें, भोजनालय और व्यापारिक प्रतिष्ठान बढ़ रहे हैं। हिन्दी की यहाँ सर्वत्र उपेक्षा दिखाई देती है। अमेरिकी शहरों में अरबी, जापानी एवं चीनी भाषाएँ तो नामपटों पर दिखाई देती हैं, परन्तु हिन्दी तो बिल्कुल ही नदारद है। अमेरिका के बाजारों में भी हिन्दी दिखाई देनी चाहिए। मेरा विश्वास है कि भारतवासी एक दिन भारत के बाजारों में हिन्दी के बोर्ड लगवाने की प्रेरणा अमेरिका या अन्य देश से लेंगे।
>
> ❑ **रेणु राजवंशी गुप्ता**

'ईश्वर का घर है संसार' लोकार्पित

मध्यप्रदेश के राज्यपाल श्री बलराम जाखड़ ने वरिष्ठ चिन्तक और साहित्यकार श्री प्रभुदयाल मिश्र की पुस्तक 'ईश्वर का घर है संसार' पुस्तक का विमोचन किया। ईशोपनिषद् और उसकी व्याख्यापरक पुस्तक पर श्री सोमपाल शास्त्री के विस्तृत विचारों को सुनकर महामहिम ने प्रसन्नता प्रकट करते हुए पुस्तक को आदि से अन्त तक पढ़ने की इच्छा व्यक्त की।

ईशावास्योपनिषद् की व्याख्यापरक यह पुस्तक वैदिक जीवन-मूल्यों को व्यवहारिक धरातल पर प्रतिष्ठित करती है। इसकी भूमिका विद्वान श्री सोमपाल शास्त्री ने लिखी है।

हिन्दी में अन्तर्राष्ट्रीय भाषा होने की क्षमता

हैदराबाद। आन्ध्र प्रदेश के राज्यपाल नारायणदत्त तिवारी ने कहा कि हिन्दी व्यापक स्तर पर ग्रहण करने योग्य भाषा है। इसमें अन्तर्राष्ट्रीय भाषा होने की क्षमता विद्यमान है। हिन्दी को वैश्विक समाज व कम्प्यूटर की दृष्टि से समर्थ बनाने की दिशा में काम करना जरूरी है।

श्री तिवारी दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (चेन्नई) की ओर से पंडित विद्यानिवास मिश्र की स्मृति में आयोजित दो-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि थे। उन्होंने कहा कि हजारों वर्षों तक संस्कृत देश को जोड़नेवाली भाषा रही है, आधुनिक समय में यह काम हिन्दी कर रही है। महात्मा गांधी ने देश को जोड़ने के लिए हिन्दी को स्वतन्त्रता आंदोलन की भाषा बनाया था। इसलिए गांधी और हिन्दी देश के अतीत ही नहीं वर्तमान व भविष्य भी हैं। उन्होंने कहा कि पंडितजी का व्यक्तित्व व पांडित्य दोनों ही प्रखर था। वे पाणिनी के प्रखर अध्येता थे। उनका मानना था कि आधुनिक भारतीय भाषाओं का विश्लेषण पाणिनी की पद्धति से होना चाहिए। इससे भारतीय भाषाओं की एकता को सिद्ध किया जा सकेगा।

विशिष्ट अतिथि मदनमोहन मालवीय हिन्दी पत्रकारिता संस्थान, वाराणसी के निदेशक प्रो० राममोहन पाठक ने कहा कि पं० विद्यानिवास मिश्र का व्यक्तित्व भारतीय समाज के लिए प्रेरणास्त्रोत था। शिक्षाविद्, सम्पादक व साहित्यकार के विविध रूपों में उनकी सेवाएँ अविस्मरणीय हैं।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 60वाँ अधिवेशन

साठ साल बाद भी हिन्दी उपेक्षित

प्रयाग के हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 60वाँ अधिवेशन 14 मार्च से 16 मार्च तक जयपुर में सम्पन्न हुआ। **श्री प्रभाष जोशी** ने अधिवेशन का समारम्भ किया।

मुख्य अतिथि **डॉ० लोकेशकुमार शेखावत** ने कहा कि कड़वे सच को स्वीकार करके ही हम हिन्दी को विश्व में स्थापित कर पाएंगे। जब अपने देश में आजादी के साठ वर्ष बाद भी हम हिन्दी को वह स्थान नहीं दिला पाये हैं, जो स्थान हिन्दी को मिलना चाहिए, तब हिन्दी को विश्व में कैसे स्थापित कर सकते हैं।

विशिष्ट अतिथि **श्री हरिशंकर भाभड़ा** ने कहा कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन और हिन्दी-भाषियों को आत्मचिन्तन की आवश्यकता है। **श्री प्रभाष जोशी** ने कहा कि समान अवसर के समतावादी बन्धुत्व का भारत बनाना हमारा सपना था। साठ साल में ऐसे देश में वृद्ध हो रहे हैं, जिसमें इण्डिया उड़ान भरने के लिए उतावला हाथ हिलाता खड़ा है और दु:खी है कि कंगाल और काहिल भारत उसे पकड़कर नीचे खींच रहा है। एक देश हिन्दुस्तान था, जो अब दो देश इण्डिया और भारत हो गया है। संसार के दस सबसे बड़े अमीरों में सबसे ज्यादा-चार खरबपति भारत के हैं, जहाँ चौरासी करोड़ लोगों को दिन में बीस रुपये भी नहीं मिलते। चौंतीस करोड़ लोग दो दिन में एक बार भोजन पाते हैं। इक्कीस करोड़ लोग नहीं जानते कि उनको पेट में डालने के लिए कुछ मिलेगा या नहीं। आम आदमी और सबसे बड़े धनपति की आमदनी के बीच कम-से-कम करोड़ गुना का अन्तर हो गया है। इनमें सबसे ज्यादा बदहाल लोग उस इलाके में हैं, जो सदियों से हिन्दी का इलाका है। ...अंग्रेजों को सबसे जबरदस्त मुकाबला हिन्दी इलाके से करना पड़ा। 1857 के विद्रोह का असल रणक्षेत्र यही इलाका और इसी के हिन्दीभाषी लोग थे। विरोध की कीमत भी इसी क्षेत्र और यहीं के लोगों को चुकानी पड़ी। 1857 का विद्रोह या प्रथम राष्ट्रीय स्वतन्त्रता-संग्राम या अंग्रेजों से सभ्यताओं का यह हमारा युद्ध अनिवार्य रूप से हिन्दीभाषियों का अनुभव है। हिन्दीभाषी इलाके आज भी भारत के सबसे पिछड़े और गरीब इलाके हैं। पश्चिमी किस्म का औद्योगीकरण तो अंग्रेजों ने पहले भी यहाँ होने नहीं दिया था। आजादी के बाद सार्वजनिक क्षेत्र में जो उद्योग लगे भी थे, उन्हें उदार अर्थव्यवस्था ने बेकार कर दिया है।

आज क्षेत्रीय पहचानों की होड़ में हिन्दीवालों और उनके इलाकों की पहचान कहाँ खड़ी है? हिन्दीवाले तो शुरू से अपने को भारत समझते रहे हैं और इसीलिए उन्होंने अपनी कोई क्षेत्रीय या अलग पहचान नहीं बनायी। क्या हम साहित्य और संस्कृतिवाले लोग इस नये उभरते सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक यथार्थ की अनदेखी करके साहित्य और भाषा के विमर्श में लगे रह सकते हैं? राष्ट्रपिता मानते थे कि हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है और इसलिए दो बार और दोनों बार इन्दौर में महात्मा गाँधी ने सम्मेलन का सभापतित्व किया। हिन्दी भारत के स्वतंत्रता-संग्राम की भाषा थी और वही स्वतन्त्र भारत की राष्ट्रभाषा थी। हिन्दी ने जब स्वतन्त्रता संग्राम और राष्ट्र-निर्माण में प्रधान भूमिका निभायी, तब वह युगधर्म की भाषा रही। उसमें ऐसा साहित्य भी रचा गया, जिससे युगधर्म का पालन हुआ।

भारत जैसा देश अपने बनाये रास्ते पर चल नहीं सका। यहाँ स्वतन्त्रता-संग्राम विवेकानन्द के दरिद्रनारायण, गांधी के अन्तिम आदमी और मार्क्स के सर्वहारा के लिए लड़ा गया था। आजादी के बाद सबको समान अवसर देनेवाले समतावादी बन्धुत्व के समाज बनाने का उपक्रम चला। लेकिन चालीस साल बाद और सोवियत संघ के विघटन के दो साल में भारत ने भी खुले बाजार की नव उदार पूँजीवादी व्यवस्था अपना ली। इन्हीं नीतियों का परिणाम है कि पन्द्रह साल में कारपोरेट्स का लाभ दिन दुगुना रात चौगुना बढ़ गया है, लेकिन चौरासी करोड़ लोगों को बीस रुपये रोज भी नहीं मिलते।

साहित्य-संस्कृति-संवाद

दूरदर्शन, वाराणसी के तत्वावधान में पिछले एक वर्ष से जारी साहित्यिक-परिसंवादों की शृंखला को दूरदर्शन द्वारा ही एक पत्रिका में संकलित और प्रकाशित किया गया है। इसमें प्रथम परिसंवाद 'कविता का कृष्णपक्ष' में डॉ० बच्चन सिंह, श्री पुरुषोत्तमदास मोदी, डॉ० मुक्ता, डॉ० श्री प्रकाश शुक्ल और सियाराम यादव ने भाग लिया। द्वितीय परिसंवाद 'किस्सागोई और इक्कीसवीं सदी' में डॉ० काशीनाथ सिंह, डॉ० अवधेश प्रधान, डॉ० विश्वनाथ प्रसाद, डॉ० बलराज पाण्डेय और डॉ० नीरजा माधव ने भाग लिया। तृतीय परिसंवाद का विषय था 'पौराणिक मिथक और समकालीन साहित्य'। इसमें डॉ० शुकदेव सिंह, डॉ० नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी, डॉ० युगेश्वर, श्री रमाकांत शर्मा उद्भ्रांत और डॉ० राजेन्द्र उपाध्याय ने प्रतिभागिता की। इन सभी परिसंवादों को दृश्यपरक बनाते हुए दूरदर्शन द्वारा इनका प्रसारण किया गया। प्रत्येक परिसंवाद के पश्चात क्रमश: कृष्णकल्पित की कविताओं का मंचन, कामतानाथ की कहानी संक्रमण का पूर्वावलोकन एवं डॉ० धर्मवीर भारती की रचना

'कनुप्रिया' का पूर्वावलोकन किया गया। इस समग्र कार्यक्रम की संकलित पत्रिका 'अंशनम्' का लोकार्पण सांसद डॉ० राजेश मिश्र ने किया।

नरेन्द्र मोदी की पुस्तक 'ज्योति पुंज' का लोकार्पण

गुजरात के मुख्यमंत्री नरेन्द्र मोदी की पुस्तक 'ज्योति पुंज' का लोकार्पण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाहक मोहन भागवत ने किया। पुस्तक में संघ के संस्थापक हेडगेवार और गुरु गोलवरकर सहित 16 व्यक्तियों के क्रियाकलापों के बारे में चर्चा है।

हिन्दी रंगमंच दिवस

'हिन्दी रंगमंच दिवस' के अवसर पर काशी के नाट्य कलाकारों ने रंगयात्रा, नाट्य गोष्ठी, नाट्य-प्रदर्शन जैसे विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए। 'सेतु' द्वारा आयोजित कार्यक्रम में डॉ० काशीनाथ सिंह, डॉ० राजेन्द्र उपाध्याय, नीलकमल चटर्जी, डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र, डॉ० श्रद्धानन्द, कृष्णकांत श्रीवास्तव आदि प्रमुख संस्कृति-कर्मियों ने भागीदारी की। इस अवसर पर कृष्णकांत श्रीवास्तव के नाट्य-संकलन 'रंग प्रहरी' का लोकार्पण किया गया।

रवीन्द्र-संगीत का नया आस्वाद

वाराणसी। पहली बार बांग्ला के बजाय हिन्दी में रवीन्द्र-संगीत की प्रस्तुति नये सांगीतिक आस्वाद की अनुभूति दे गयी। ख्यातिलब्ध बांग्ला संगीतज्ञ श्री दाऊ लाल कोठारी ने स्वयं रवीन्द्र की रचनाओं का अनुवाद और उसकी स्वरलिपि तैयार की और अपने साथी कलाकारों के सहयोग से उसे प्रस्तुत भी किया। काशी के संगीत-साहित्य-रसिक हिन्दी और बांग्ला भाषा के सुधी श्रोताओं ने श्री दाऊलाल कोठारी की इस सांगीतिक प्रस्तुत की रवीन्द्र-संगीत के नये आस्वाद के रूप में सराहना की।

हिन्दी साहित्य में हास्य व्यंग्य-परम्परा

वाराणसी। सामाजिक एवं साहित्यिक संस्था 'कामायनी' की ओर से पिशाचमोचनस्थित माँ शारदा आश्रम में 'हिन्दी साहित्य में हास्य-व्यंग्य परम्परा का विकास' साहित्यिक गोष्ठी हुई। मुख्य अतिथि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की रीडर डॉ० चन्द्रकला त्रिपाठी थीं। उन्होंने कहा कि हिन्दी साहित्य में हास्य-व्यंग्य की स्वस्थ परम्परा है। हास्य और व्यंग्य अलग-अलग होते हुए भी दोनों का उद्देश्य एक ही है। हास्य और व्यंग्य साहित्य को रोचक बनाते हैं, लेकिन हिन्दी साहित्य के इतिहास में इस परम्परा को अधिक महत्त्व नहीं दिया गया। डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र ने कहा कि हास्य और व्यंग्य अलग-अलग है। इस पर विस्तार से विचार की आवश्यकता है। यूपी कालेज के हिन्दी विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ० रामसुधार सिंह ने हास्य व्यंग्य

भोजपुरी को हीनताग्रंथि से बाहर निकालिए

पिछले दिनों राजधानी दिल्ली में विश्व भोजपुरी सम्मेलन हुआ। दूर-दूर से लोग आए और भोजपुरी भाषा, संस्कृति और समाज के उत्थान की घोषणाएँ हुईं, लेकिन क्या इतने भर से भोजपुरी समाज का उद्धार हो जाएगा? अगर भोजपुरी समाज का कोई लेखक किसानों और मजदूरों से बात करना चाहता है तो जाहिर है उसे भोजपुरी में ही लिखना चाहिए, जो वहाँ का समाज बोलता है।

आज भी भोजपुरी में कोई दैनिक अखबार नहीं है। ऐसी कोई पत्रिका नहीं, जिसकी पहुँच सुदूर अंचल के लोगों तक हो। भोजपुरी में बात करना कम हो रहा है। वह सिर्फ गाँवों तक सिमट कर रह गई है। चार शिक्षित लोग अगर इकट्ठा होकर बात करें, तो बोजपुरी के बदले हिन्दी का प्रयोग होता है। पढ़े-लिखे व संभ्रांत लोगों के अपने रिश्तेदार आ जाएँ, तो क्या मजाल कि भोजपुरी में बात हो जाए। भोजपुरी को वैसी ही हीनता-ग्रन्थि का सामना हिन्दी से करना होता है, जैसी हिन्दी को अंग्रेजी से।

भोजपुरी अंचल में शिक्षा में नई चेतना आई है। क्रय-शक्ति में भी बढ़ोतरी हुई है, लेकिन इतनी नहीं कि उसे उल्लेखनीय माना जाए। भोजपुरी समाज स्वाभिमानी व समय के आगे चलनेवाला समाज है। उसे अन्य जगहों पर प्रताड़ना न सहनी पड़े, इसके लिए यह आवश्यक है कि भोजपुरी प्रदेशों के शासक जीविका के नए अवसर सृजित करें।

❑ **परिचय दास**

(भोजपुरी के प्रखर साहित्यकार)

नई दिल्ली में मैथिली और भोजपुरी अकादमी का गठन

दिल्ली सरकार ने मैथिली और भोजपुरी अकादमी गठित करने की अधिसूचना जारी कर 21 प्रमुख व्यक्तियों को सदस्यों के रूप में मनोनीत किया है। प्रधान वित्त सचिव तथा कला व संस्कृति सचिव पदेन सदस्य रहेंगे। अकादमी की अध्यक्ष मुख्यमंत्री शीला दीक्षित होंगी। शीला दीक्षित ने अकादमी के लिए प्रो० अनिल मिश्र को उपाध्यक्ष मनोनीत किया है। प्रो० मिश्र दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राध्यापक हैं। अकादमी का सचिव, सदस्य सचिव के रूप में काम करेगा। अकादमी की प्रबन्ध-समिति का कार्यकाल दो साल का होगा।

दिल्ली मंत्रिमंडल ने 7 जनवरी, 2008 को मैथिली और भोजपुरी अकादमी बनाने का फैसला किया था। दिल्ली में इस समय हिन्दी, उर्दू, पंजाबी, संस्कृत और सिंधी भाषाओं की अकादमियाँ कार्य कर रही हैं। मुख्यमंत्री ने विश्वास व्यक्त किया कि नई अकादमी मैथिली और भोजपुरी साहित्य को समृद्ध बनाने का कार्य करेगी और इन भाषाओं से हिन्दी में तथा हिन्दी व अन्य भाषाओं की रचनाएँ मैथिली व भोजपुरी में अनूदित व प्रकाशित कराएगी।

रामधारी सिंह दिनकर : सृजन और चिन्तन

प० बंगाल के दुर्गापुर अनुमण्डल के अन्तर्गत मानकर कॉलेज के हिन्दी विभाग द्वारा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के तत्वावधान में विभागाध्यक्ष डॉ० कुसुम राय के उद्यम से राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' की जन्मशतवार्षिकी के उपलक्ष्य में राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन 'रामधारी सिंह दिनकर : सृजन और चिन्तन' विषय पर 9-10 अप्रैल को सम्पन्न हुआ। उद्घाटन उस कॉलेज के प्राचार्य डॉ० दुलालचन्द्र गाँधी ने दीप प्रज्ज्वलन कर किया। इस पर बीज वक्तव्य हैदराबाद विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर और अध्यक्ष विजेन्द्र नारायण सिंह ने दिया। अपने बीज भाषण में उन्होंने दिनकर के समस्त कृतित्व को केन्द्र में रख कर उनमें निहित विचारों का साकार चित्र उभार कर प्रस्तुत किया कि किस प्रकार उनके काल में मानवीय दृष्टि, शोषितों के प्रति सहानुभूति, देशप्रेम, राष्ट्रीयता के स्वर के साथ पूँजीवाद और साम्राज्यवाद का विरोध, प्रवृत्ति मार्ग की स्वीकृति मिलती है। विदेशी सत्ता के अधीनस्थ कार्यरत होकर भी उन्होंने उसी सत्ता पर पूरे दम खम के साथ प्रचण्ड आघात किया। वक्ता का मुख्य वक्तव्य दिनकर काव्य के प्रेमतत्त्व पर रहा। अन्य प्रमुख वक्तागणों में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रो० अवधेश प्रधान ने दिनकर की संस्कृति चिन्ता पर डॉ० रामाज्ञा राय ने 'दिनकर काव्य में वर्णित उपनिवेशवाद-विरोधी भावना' पर, वर्द्धमान विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर और अध्यक्ष विमल ने 'दिनकर के युगबोध' पर, डॉ० मु० कमाल ने उनकी कृति 'उर्वशी : पुनर्विचार' पर, शांतिनिकेतन के प्रो० मुक्तेश्वरनाथ तिवारी ने 'दिनकर काव्य और उत्तर स्वच्छन्दतावाद' पर, डॉ० सुभाष राय ने 'दिनकर काव्य में चित्रित आजाद भारत की तस्वीर' पर अपने महत्त्वपूर्ण गम्भीर विचार रखे। डॉ० कुसुम राय ने 'दिनकर काव्य में निहित स्वच्छन्दतावादी वैशिष्ट्य' पर अपना आलेख पढ़ा।

शारद की वरद वीणा झंकार पुस्तकें हैं।
भवभूति कालिदास का संसार पुस्तकें हैं।
मीरा कबीर तुलसी का सार पुस्तकें हैं।
जिसमें है ढाई आखर, वो प्यार पुस्तकें हैं॥

❑ **आचार्य विष्णु विराट चतुर्वेदी**

बड़ौदा विश्वविद्यालय, बड़ौदा

परम्परा की विवेचना करते हुए मुख्य रूप से काशी की हास्य-व्यंग्य पर विस्तार से प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि भारतीय लोक कथाओं में हास्य-व्यंग्य का रूप विद्यमान है। डॉ० मुक्ता ने हास्य-व्यंग्य की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए बनारसी ठहाकों का सन्दर्भ देते हुए विशुद्ध हास्य को जीवन के लिए आवश्यक बताया।

अनुसंधानपूर्ण प्रबन्ध का लोकार्पण

भारतीय छात्र आन्दोलन का इतिहास 'स्वाधीनता का दौर : स्वतंत्रता के बाद' श्री श्यामकृष्ण पाण्डेय और डॉ० रचना सिंह द्वारा लिखित अनुसंधानपूर्ण प्रबन्ध का लोकार्पण 10 अप्रैल 2008 को दिल्ली में हुआ। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से प्रकाशित इस ग्रन्थ के लोकार्पण समारोह की अध्यक्षता डॉ० मुरलीमनोहर जोशी ने की। राज्यपाल आन्ध्र प्रदेश, श्री नारायणदत्त तिवारी समारोह के मुख्य अतिथि थे। समारोह में श्री नीतिश कुमार, श्री जनेश्वर मिश्र, श्री अरुण जेटली, श्री रविशंकर प्रसाद, श्री प्रफुल्ल कुमार महंथ जैसे राजनयिकों के साथ इतिहासविद् प्रो० गोविन्दचन्द्र पाण्डेय, वरिष्ठ पत्रकार श्री प्रभाष जोशी, चिन्तक-विचारक श्री गोविन्दाचार्य उपस्थित थे।

मीडिया का समकालीन परिदृश्य

पण्डित माखनलाल चतुर्वेदी के जन्म-दिवस (4 अप्रैल) पर माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय में स्मृति व्याख्यान का आयोजन किया गया। 'मीडिया का समकालीन परिदृश्य' विषय पर आयोजित इस कार्यक्रम की अध्यक्षता मध्यप्रदेश मानव अधिकार आयोग के पूर्व अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री आर०डी० शुक्ल ने की। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि, साहित्यकार एवं नवभारत टाइम्स के दिल्ली के सम्पादक श्री मधुसूदन आनंद थे।

कुलपति श्री अच्युतानंद मिश्र ने कहा कि दादा माखनलाल चतुर्वेदी ने अपने दौर के साहित्य, समाज, संस्कृति और राजनीति को न केवल प्रभावित किया, बल्कि राष्ट्र और समाजोन्मुखी आदर्श पत्रकारिता के मानक भी गढ़े। एक समय गणेश शंकर विद्यार्थी ने कहा था कि ''पत्रकारिता अमीरों की सलाहकार और गरीबों की मददगार होनी चाहिए'', पर आज मीडिया पर आरोप है कि वह अमीरों की मददगार और गरीबों की सलाहकार बन गई है। आज मीडिया के समक्ष विश्वसनीयता का बड़ा संकट उपस्थित है।

समारोह के मुख्य वक्ता श्री मधुसूदन आनंद ने कहा कि मैं इस आम निष्कर्ष से कतई सहमत नहीं हूँ कि वर्तमान मीडिया का सारा परिदृश्य पतनोन्मुखी हो गया है। आजादी के पहले पत्रकारिता का एकमात्र ध्येय आजादी के लिए वातावरण निर्माण था, आजादी के बाद मीडिया ने लोगों को जागरूक और चेतना सम्पन्न बनाया है। मीडिया ने भारतीय जनता को सुरक्षा कवच का अहसास कराया है। मीडिया के सारे पतन के बावजूद इस महत्त्वपूर्ण भूमिका से इन्कार नहीं किया जा सकता। श्री आनंद ने पत्रकारिता की वर्तमान स्थिति को आशाजनक बताते हुए कहा कि जहाँ पश्चिमी देशों में पत्रकारिता के सामने पाठकों की घटती संख्या एक बड़ी चिन्ता है, वहीं भारत में अखबारों के विशेषकर भारतीय भाषाओं में पाठकों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है, यहाँ का पाठक प्रतिबद्ध है। न्यायमूर्ति श्री आर०डी० शुक्ल ने कहा कि पत्रकारों की नई पीढ़ी को संस्कृति और आदर्शोन्मुखी होना ज्यादा जरूरी है क्योंकि बिना आदर्श के कोई व्यक्ति, समाज या देश उन्नति नहीं कर सकता। मीडिया को जनता की नब्ज की जानकारी और समझ रखनी होगी तभी उसकी विश्वसनीयता कायम रहेगी। आज का मीडिया व्यवसायीकरण के कारण आदर्श भूल रहा है।

भारतीय पत्रकारिता कोश

नई दिल्ली। माधव राव सप्रे संग्रहालय के संस्थापक-संयोजक विजयदत्त श्रीधर द्वारा लगभग पन्द्रह वर्षों की मेहनत से दो खण्डों में प्रकाशित 'भारतीय पत्रकारिता कोश' का लोकार्पण सूचना एवं प्रसारण मंत्री प्रियरंजन दास मुंशी ने किया। उन्होंने भारतीय पत्रकारिता में कॉरपोरेट प्रबंधन के बढ़ते प्रभाव पर गहरी चिंता जताई और कहा कि इससे पत्रकारिता का चेहरा चमकदार जरूर हुआ है, लेकिन इससे पत्रकारों की आजादी को आघात भी पहुँचा है। समारोह में एडीटर्स गिल्ड के अध्यक्ष एवं हिन्दी पत्रिका 'आउटलुक साप्ताहिक' के संपादक आलोक मेहता तथा हिन्दी पत्रिका 'कादम्बिनी' के सम्पादक विष्णु नागर ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

सवाल दलित स्त्री की मुक्ति का

दलित स्त्री अपने मूलभूत अधिकारों के लिए लड़ रही है, आज भी वह उच्च जाति के हाथों की कठपुतली बनी हुई है। उन्हें अपनी जीविका को चलाने के लिए मैला ढोने जैसे कार्य करने के लिए मजबूर होना पड़ता है। आज भी दलित औरतें जाति, लिंग और आर्थिक स्तर पर शोषण का शिकार हो रही हैं। दलित औरतों के लिए ''मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त करने की पहल दलित लेखिकाओं को अपने साहित्य के माध्यम से करनी पड़ेगी। हमें स्त्री-मुक्ति के सवाल पर पुरुष समाज का समर्थन कभी नहीं मिला। शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने से पहले हमें बाहरी तथा आन्तरिक शोषण रोकना तथा संगठित होना पड़ेगा।'' उक्त बातें बीते दिनों गोविन्दवल्लभ पंत सामाजिक संस्थान, इलाहाबाद के दलित संसाधन केन्द्र के तत्वावधान में आयोजित दो दिवसीय कार्यशाला में मुख्य अतिथि विमल थोरात ने कहीं।

अमृतलाल नागर स्मृति संध्या

डॉ० शरद नागर के आवासीय परिसर में 'संचित स्मृति न्यास' द्वारा आयोजित 'अमृत-स्मृति' कार्यक्रम में साहित्यकार अमृतलाल नागर और उनके बहुकलाधर्मी पुत्र कुमुद नागर को लोगों ने आत्मीयता तथा अंतरंगता के वातावरण में याद किया। कार्यक्रम के अध्यक्ष डॉ० सूर्यप्रसाद दीक्षित ने भावभीने श्रद्धासुमन अर्पित किए और कहा कि नागरजी का परिवार कला-समर्पित परिवार है। नागर जी कहानियों, उपन्यासों के लेखक और अविस्मरणीय पात्रों के सृजक ही नहीं, गंभीर सर्वेक्षण और समाजशास्त्र के अध्येता भी थे। निर्गुनियाँ के घर तक पहुँचने का साहस उन्होंने किया। लुप्तप्राय कलाओं एवं साहित्य, लोक-साहित्य को सामने लाने के वह हमेशा उत्साही-उत्प्रेरक रहे।

श्रमिक संस्कृति : शक्ति और सौन्दर्य

मध्यप्रदेश प्रगतिशील लेखक संघ की जिला इकाई छिंदवाड़ा, मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन और एटक-इंटक ने चाँदमेटा में इंटक के केन्द्रीय मंच पर डॉ० नामवर सिंह के व्याख्यान का संयुक्त रूप में आयोजन किया गया। इस आयोजन में डॉ० नामवर सिंह, प्रो० कमलाप्रसाद, राजेन्द्र शर्मा, प्रभुनाथ सिंह आजमी, शरद दत्त, प्रेमचंद गाँधी के साथ कोयलांचल के महाप्रबन्धक ओ०पी० सिंह (कार्यक्रम अध्यक्ष) उपस्थित थे।

डॉ० नामवर सिंह ने कहा, ''मेरी डायरी में आज का दिन सुनहरे अक्षरों में नहीं बल्कि लाल स्याही से दर्ज किया जाएगा। मैं भी अपने को मजदूर मानता हूँ। आप खदानों-खेतों में औजारों से काम करते हैं, मैं कलम से। आज भी मैं आपसे कलम के मजदूर की हैसियत से मुखातिब हूँ।'' उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में किसानों, मजदूरों के अभूतपूर्व योगदान की चर्चा की। मंगल पाण्डेय की विद्रोह-चेतना, आजाद हिन्द फौज का गठन, विभिन्न स्तरों पर विभिन्न पार्टियों में वामपंथी विचारधारा का प्रभाव, बढ़ते औद्योगिक परिवेश और उस सबके बीच मिली स्वतंत्रता को विवेचित करते हुए उन्होंने कोयला मजदूर और कम्पनी सरकार के रिश्तों को भी तलाशने की पहल की। उन्होंने अपील की कि विभाजक शक्तियों से सावधान रहकर श्रमिकों को अपनी सामाजिक भूमिका का निर्वाह करना होगा। छोटी-छोटी सुविधाओं के साथ बड़े लक्ष्यों को नहीं भुलाया जाना चाहिए।

'समय-चिंतन' का लोकार्पण

गुजराती साहित्य प्रदान प्रतिष्ठान, कांदिवली, मुम्बई के मंत्री श्री दिनकर जोशी द्वारा सम्पादित काका साहेब कालेलकर के मूल हिन्दी लेखों के ग्रन्थ 'समय-चिंतन' का लोकार्पण करने के बाद संत श्री मोरारी बापू ने कहा कि काकासाहेब को

गाँधीजी सवाई गुजराती कहते थे। गुजराती से अधिक यानी सवाई गुजराती। उन्होंने गुजरात की और गुजराती साहित्य की बहुमूल्य सेवा की है।

व्याख्यानमाला/सम्मान, लोकार्पण

संत साहित्य-मनीषी डॉ० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी स्मृति चतुर्थ व्याख्यानमाला साहित्य-संस्कृति संस्थान, फैजाबाद के तत्वावधान में 'जनसंघर्ष एवं प्रतिरोध की संस्कृति' विषय पर आयोजित की गई। विषय प्रवर्तन करते हुए इतिहासविद् एवं 'इतिहासबोध' पत्रिका के सम्पादक प्रो० लालबहादुर वर्मा ने कहा कि प्रजातंत्र व जनतंत्र में आजादी के साठ वर्ष बाद भी अन्तर नहीं स्पष्ट हो सका है। आज समाज में संविधान की मिट्टी पलीद कर दी गई है। जिस संविधान द्वारा हमारा समाज संचालित हो रहा है उसमें भी आज प्रतिरोध की आवश्यकता है। मुख्य अतिथि केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा के उपाध्यक्ष प्रो० रामशरण जोशी ने कहा कि जिस तरीके से वैश्वीकरण तेजी से बढ़ता जा रहा है उसी प्रकार प्रतिरोध और जनसंघर्ष भी बढ़ेगा। जनमोर्चा के सम्पादक, यशभारती सम्मानप्राप्त प्रसिद्ध पत्रकार श्री शीतला सिंह ने वैश्विक आतंकवाद के खतरों को उजागर किया।

कार्यक्रम के आरम्भ में संस्थान के अध्यक्ष एवं सागर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रो० आनन्दप्रकाश त्रिपाठी ने अतिथियों का स्वागत किया और संस्थान की गतिविधियों एवं भावी योजनाओं पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर साहित्य सेवा के लिए सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के पूर्व कुलपति एवं साहित्यकार डॉ० राजदेव मिश्र एवं कवि डॉ० देवीसहाय पाण्डेय 'दीप' को स्मृति चिह्न, प्रशस्ति पत्र, शाल, श्रीफल एवं ग्यारह-ग्यारह सौ रुपये प्रदान कर सम्मानित किया गया।

'देवीशंकर अवस्थी : संकलिक निबंध'

'देवीशंकर अवस्थी : संकलित निबंध' (प्रकाशक-नेशनल बुक ट्रस्ट) का **लोकार्पण** 5 अप्रैल को साहित्य अकादमी के सभागार में हुआ। वक्ताओं ने श्री देवीशंकर अवस्थी को हिन्दी आलोचना में नयी दृष्टि के उपस्थापक के रूप में स्मरण किया।

कोटा में व्यंग्य शिविर

व्यंग्य के सामाजिक सरोकार पर 29-30 मार्च को दो दिनी संगोष्ठी हुई। संगोष्ठी को 'व्यंग्य शिविर' के नाम से जाना गया। राजस्थान साहित्य अकादमी, भारतेन्दु समिति, कोटा तथा अ०भा०सा०प० के संयुक्त तत्वावधान में लगभग 50 व्यंग्यकारों ने इसमें भाग लिया। बीज वक्तव्य में डॉ० उदयप्रताप सिंह ने व्यंग्य साहित्य के विविध आयामों पर विस्तृत चर्चा करते हुए इसे एक स्वतंत्र विधा के रूप में परिभाषित किया। डॉ० अमित गुप्ता ने साहित्य और समालोचना में तालमेल पर बल दिया और कहा कि तभी व्यंग्य का विकास सम्भव है। अध्यक्ष डॉ० विजय ने कहा कि व्यंग्य को अपनी राह स्वतंत्र बनानी होगी।

हिन्दी शोध के लिए राष्ट्रीय शोध आयोग की माँग

आगरा के केन्द्रीय हिन्दी संस्थान में आयोजित द्विदिवसीय भारतीय हिन्दी शिक्षण सम्मेलन में हिन्दी शिक्षण की उच्च परम्पराओं और नई पद्धतियों को अपनाने पर विचार-विमर्श किया गया और हिन्दी शोध की गरिमा तथा स्तर को बनाए रखने के लिए राष्ट्रीय शोध आयोग की स्थापना की माँग की गई। दो दिवसीय राष्ट्रीय सम्मेलन में देश भर के शिक्षाविदों ने भाग लिया। प्रो० राममूर्ति त्रिपाठी, निर्मला जैन, केदारनाथ सिंह, नवलकिशोर, तुलाराम पाटिल, बी०डी० हेगड़े, विश्वनाथ तिवारी, असगर वजाहत आदि अनेक विद्वानों ने अपने विचार रखे।

किताब जमीं पै आफताब है

किताब तो किताब है,
ज़मीं पै आफताब है।
हृदय की आँख खोलती
ये चीज़ लाजवाब है॥
ये सच है और जवाब है।
मनुष्यता का, प्यार का
ये आईना, जनाब है॥

—प्रो० देवव्रत जोशी, रतलाम

बनारस में साहित्यकारों का आना

बेशक! बनारस प्राचीन नगर है और पुरानी संस्कृति में उसकी जड़ें बहुत गहरी हैं। पर उन दिनों बनारस बदल रहा था। साहित्य की दुनिया में तब तक गीतकार ही छाए हुए थे। पर तीन चीजें थीं, जो परिवर्तन के स्पष्ट संकेत दे रही थीं। एक आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का बनारस आना और दूसरा त्रिलोचन शास्त्री का व्यक्तित्व, जो उन दिनों अपने उभार पर था। तीसरी चीज थी एक नए साहित्यकार के रूप में नामवर सिंह का उदय। ये तीन लेखक अपने-अपने ढंग से बनारस को चुपचाप बदल रहे थे और वह शहर अपनी प्राचीनता के भीतर से जैसे एक नया जन्म ले रहा था। उसी दौर में मेरा भी रुझान लिखने की तरफ हुआ। मेरा सौभाग्य था कि उस आरंभिक दौर में त्रिलोचन शास्त्री से मेरा परिचय हो गया। कविता में क्या होना चाहिए और क्या नहीं होना चाहिए की पहली सीख मुझे उन्हीं से मिली थी, जो आज तक काम आ रही है। तब तक समकालीन शब्द का प्रचलन नहीं हुआ था। आधुनिक शब्द चलता था। इस तरह यह मेरा आधुनिकता से आरंभिक साक्षात्कार था। ❑ **डॉ० केदारनाथ सिंह**

भोजन और दवा के लिए साहित्य अकादमी पदक बेचना चाहते हैं अमरकांत

वर्ष 2007 के साहित्य अकादमी पुरस्कार-विजेता अमरकांत की दशा इतनी दयनीय हो गई है कि वे अपने तमाम पदक बेचना चाहते हैं। गरीबी से जूझ रहे 83 वर्षीय साहित्यकार अमरकांत अपनी मौलिक पाण्डुलिपियाँ पहले बेच चुके हैं। उत्तर प्रदेश के बलिया जिले से ताल्लुक रखनेवाले साहित्यकार अमरकांत ने वर्ष 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में हिस्सा लिया था। उन्हें महात्मा गाँधी पुरस्कार और साहित्य भूषण पुरस्कार से भी नवाजा जा चुका है। इन दिनों अमरकांत तंगहाली में दिन गुजार रहे हैं।

वर्ष 2007 में अपने उपन्यास 'इन्हीं हथियारों से' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार पानेवाले अमरकांत कहते हैं कि यदि मुझे जलालत और गरीबी में रहना पड़े तो इन पदकों का मेरे लिए कोई उपयोग नहीं है।

आमतौर पर पुस्तकों को सूचना और ज्ञान का खजाना ही माना जाता है। विद्यार्थी इसलिए पुस्तकें पढ़ते हैं, क्योंकि उन्हें परीक्षा पास करनी है। प्रोफेसर और शिक्षक इसलिए पढ़ते हैं क्योंकि उन्हें ज्ञान प्राप्त करके दूसरों को पढ़ाना है। बुद्धिजीवी इसलिए पढ़ते हैं क्योंकि उन्हें पुस्तकें लिखनी होती हैं। आम आदमी इसलिए पढ़ता है, क्योंकि उसे ज्ञान की थोड़ी भूख होती है। लेकिन सब ऐसे नहीं होते। **बहुत से लोग तो इसलिए पढ़ते हैं, क्योंकि उन्हें पुस्तकें पढ़ना अच्छा लगता है।**

—डॉ० विजय अग्रवाल

अध्येताओं, पुस्तकालयों, शिक्षा संस्थाओं

के लिए

साहित्यिक तथा विभिन्न विषयों की हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत पुस्तकों का विशाल संग्रह

तीन हजार वर्ग फुट में विशाल शोरूम

विश्वविद्यालय प्रकाशन

विशालाक्षी भवन, चौक
(चौक पुलिस स्टेशन परिसर के पार्श्व में)
वाराणसी - 221 001 (उ०प्र०)
Phone & Fax : (0542) 2413741, 2413082
E-mail : vvp@vsnl.com & sales@vvpbooks.com
Website : www.vvpbooks.com

पुस्तक परिचय

घोड़े पै हौदा, हाथी पर जीन

(नाटक बनती कहानियाँ)

डॉ० भानुशंकर मेहता

प्रथम संस्करण : 2006

पृष्ठ : 144

सजिल्द: रु० 120.00/ **ISBN: 978-81-89498-12-6**

प्रकाशक : अनुराग प्रकाशन, वाराणसी

मेरे मन में एक विचार आता है कि हिन्दी में ही हमारे यहाँ अनेक सफल कहानीकार हैं और कभी-कभी उनका स्मृति दिवस मनाने की इच्छा होती है। क्या हम किसी शाम लेखक की तीन कहानियों का मंचन करके उनको श्रद्धा-सुमन अर्पित नहीं कर सकते? हम प्रसाद संध्या, प्रेमचंद संध्या, रवीन्द्र संध्या, बनफूल संध्या मना सकते हैं। पूरे भारतीय साहित्य को लें तो फिर साल में हर दिन कहानियों को मंचित कर सकते हैं। यह तो अक्षय भंडार है लेकिन हम हैं कि खजाने की पेटी पर लेटकर विश्राम कर रहे हैं। **—भानुशंकर मेहता**

काशी नटराज की नगरी है। इस नगर में नित्य नई घटनाएँ होती हैं जो इतिहास बनते-बनते कहानी बन जाती हैं, जिन्हें कालान्तर में नाट्य रूपान्तरित कर उनकी पुनरावृत्ति की जाती है। ये कहानियाँ अपनी संवेदना के कारण सजीव हो उठती हैं और सहजता से रंगमंच पर अवतरित हो जाती हैं।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के वारन हेस्टिंग्स काशी-नरेश चेतसिंह को प्रताड़ित करने और गिरफ्तार करने काशी आते हैं, जनता के विद्रोह ने उन्हें सहसा भागने पर मजबूर किया। लोगों ने कहा—घोड़े पै हौदा और हाथी पर जीन, भाग गया वारन हेस्टिंग्स। यह काशीवासियों की जीवंतता का प्रतीक है।

प्रमुख हिन्दी लेखकों में प्रेमचंद, प्रसाद, विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी', शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र', मालती जोशी की प्रसिद्ध कहानियाँ नाट्य निदेशक तथा रंगकर्मी डॉ० भानुशंकर मेहता के सजीव नाट्यरूपान्तरण से रंगमंच पर सजीव हो उठती हैं। ये कहानियाँ हैं **जयशंकर प्रसाद** की 'आकाशदीप' व 'ममता', **प्रेमचंद** की 'ईश्वरीय न्याय', 'पंच परमेश्वर' व 'नमक का दरोगा', **विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक'** की 'ताई', **चन्द्रधर शर्मा गुलेरी** की 'बुद्धु का काँटा' **शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र'** की 'घोड़े पै हौदा, हाथी पर जीन', 'नागर नैया जाला काले पनियाँ रे हरी', 'सूली ऊपर सेज पिया की' व 'अल्ला तेरी महजिद अव्वल बनी', **मालती जोशी** की 'मानिनी', **मणिशंकर हरिकृष्ण शास्त्री** की 'श्री आद्यशंकराचार्य', **गोस्वामी तुलसीदास** की 'पादुकाभिषेक' व 'पंचवटी प्रसंग'।

आज भी वही बनारस है

(हास्य-व्यंग्य)

विश्वंभरनाथ त्रिपाठी 'बड़े गुरू'

सम्पादन

रामलखन मौर्य, बच्चन सिंह

प्रथम संस्करण : 2007

पृष्ठ : 148

सजिल्द: रु० 150.00/ **ISBN: 81-7124-557-9**

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

बनारस हास-परिहास का गढ़ रहा है। यहाँ भारतेन्दु से आरम्भ करके अन्नपूर्णानन्द, बेढ़ब, बेधड़क, भैयाजी, चोंच, कौतुक प्रभृति अनेक दिग्गज मैदान में बनारसीपन की छटा बिखेरते रहे हैं और इस दौर में बड़ेगुरू मौन, स्वान्त:सुखाय साधना करते रहे। अखबारों में उनकी रचनाएँ एक आभूषण की तरह चिपकी रही हैं पर उनका मूल्यांकन हुआ ही नहीं। आज उनकी रचनाओं पर दृष्टिपात करें तो समझ में आएगा कि बड़े गुरू वास्तव में बनारसीपन के सर्वश्रेष्ठ प्रथम श्रेणी के रचनाकार हैं। यही नहीं विरल संयोग है कि वे कवि होने के साथ-साथ चित्रकार भी हैं।

इस वर्तमान काव्य-संग्रह 'आज भी वही बनारस है' की 40 रचनाएँ बड़ेगुरू के बनाए कार्टूनों से सुसज्जित हैं अर्थात् सोने में सुहागा भी मिला है। इनमें व्यंग्यकार की दृष्टि से राजनीतिक परिप्रेक्ष्य पर दृष्टि डाली गई है, समाज और सामाजिक रीति-रिवाजों और कुरीतियों की भी खबर ली गई है। इसमें नेता हैं, लक्ष्मीवाहन है, तटस्थ हैं, अमेरिकी गेहूँ है, राजलीला है, लाढ़ेराम हैं, उग्रवाद, आतंकवाद और अणुबम है, खतरे का भोंपा है, पूर्ण शान्ति है, और है नाक में दम कि मृत्यु का कौन ठिकाना। समझदार की मौत है और आशा है कल का दिन होगा सुनहला। समाज की दु:खती रग पर हास्य-व्यंग्य की नश्तर लगाती ये रचनाएँ बेजोड़ हैं।

इनके साथ इस संग्रह में एक कला खण्ड भी है जो अक्षर तो नहीं पर बोलता है, बनारस का दर्शन कराता है। जो बनारस के हैं, बनारसी हैं वे इन चित्रों को देखकर लोट-पोट हो जायेंगे। ढूँढियेगा इसमें आपकी, आपके नेता की, आपके शहर की कितनी छबियाँ हैं और जब ये चित्र खोपड़ी में तागड़ धिन्ना करेंगे तो बरबस आप कह उठेंगे—'बाह गुरू बाह'।

संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास

(संस्कृत साहित्य)

डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी

द्वितीय संशोधित परिवर्धित संस्करण : 2007

पृष्ठ : 576

सजिल्द: रु० 400.00/ **ISBN: 978-81-7124-569-7**

अजिल्द: रु० 250.00/ **ISBN: 978-81-7124-563-5**

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

प्रो० राधावल्लभ त्रिपाठी बहुमुखी प्रतिभा के धनी विश्रुत विद्वान् हैं। उनकी लेखनी की प्रसूति सदा संग्रहणीय होती है। 'संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास' में संस्कृत साहित्य के इतिहास को अत्यन्त प्रामाणिक रूप में बोधगम्य एवं प्रवाहपूर्ण भाषा में निबद्ध किया गया है। इसमें वैदिक साहित्य से लेकर रामायण-महाभारत, महाकाव्य, नाटक, गद्यकाव्य सहित संस्कृत में रचित अधुनातन विधाओं की रचनाओं पर भी प्रकाश डाला गया है। प्राय: सभी विधाओं में बीसवीं शताब्दी की प्रमुख कृतियों पर भी दृष्टिपात किया गया है। इस प्रकार प्रस्तुत ग्रन्थ के माध्यम से समग्र संस्कृत साहित्य का आकलन एक ही स्थान पर सुलभ हो सका है। यह छात्रों एवं अध्यापकों—दोनों के लिए ही समान रूप से उपयोगी है। **—प्रो० मुरलीमनोहर पाठक**

आचार्य, संस्कृत एवं प्राकृत भाषा विभाग

दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

■ ■ ■

संस्कृत साहित्य के बहुश्रुत अध्येता प्रो० राधावल्लभ त्रिपाठी का यह ग्रन्थ इस विषय में कतिपय नयी कड़ियाँ जोड़ता है और नये वातायन खोलता है। इसकी एक विशेषता संस्कृत साहित्य की विकास-यात्रा का उद्भवकाल, स्थापनाकाल, समृद्धिकाल और विस्तारकाल—इन चार क्रमिक सोपानों में विभाजन है।

संस्कृत साहित्य की परम्परा के विषय में बनी हुई अनेक भ्रांतियों को भी यह पुस्तक तोड़ती है, तथा इस साहित्य में प्रतिबिंबित उदात्त जीवन मूल्यों तथा चिंतन परम्पराओं के सन्दर्भ में भी संस्कृत कवियों के अवदान, उपलब्धि तथा सीमाओं पर तेजस्वी विमर्श प्रस्तुत करती है। संस्कृत काव्यों से सुन्दर उद्धरण यहाँ सरल-सुबोध अनुवाद के साथ प्रस्तुत किये गये हैं, जिससे संस्कृत न जानने वाले पाठक भी मूल के सौन्दर्य का आनन्द ले सकते हैं। वैदिक साहित्य से बीसवीं शताब्दी तक विकसित संस्कृत साहित्य की परम्परा का यह आकलन छात्रों, सामान्य पाठकों तथा अनुसंधाताओं के लिये समान रूप से उपयोगी है।

—प्रकाशक

भारत के नव-निर्माण का आवाहन (Awaken Bhart)
(हिन्दुत्व का पुनरुत्थान)
डॉ० डेविड फ्राली
अनुवादक
केशवप्रसाद कायाँ
प्रथम संस्करण : 2008
पृष्ठ : 296

सजिल्द: रु० 320.00/ **ISBN: 978-81-89498-29-0**
अजिल्द: रु० 225.00/ **ISBN: 978-81-89498-30-6**
प्रकाशक : अनुराग प्रकाशन, वाराणसी

प्रस्तुत ग्रन्थ की विषय-वस्तु है बौद्धिक स्तर पर पुनरुत्थित हिन्दुत्व की आवश्यकता का दिग्दर्शन कराना। एक ऐसा हिन्दू बुद्धिजीवी वर्ग जो आधुनिक मीडिया, कम्प्यूटर युग (संगणक युग) तथा सूचना तंत्र के विकास की क्रांति से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने में सक्षम हो। ऐसा अभिनव बुद्धिजीवी वर्ग जो एक ओर सम्यक् रूप से आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी तथा असंख्य हिन्दू विरोधियों की आलोचनाओं का करारा जवाब देने में सक्षम हो, वहीं दूसरी ओर आत्मनिरीक्षण करते हुए हिन्दू-समाज की कमजोरियों तथा सामयिक हिन्दू विचारधारा की न्यूनताओं का भी उद्घाटन कर सके।

सबसे महत्त्वपूर्ण यह है कि हिन्दुओं को विश्व समुदाय के समक्ष अपने विचारों को दृढ़तापूर्वक रखना होगा। हो सकता है कि इससे दूसरे समुदाय यह समझें कि उन्हें चुनौती दी जा रही है तो भी उनके आक्रोश की चिंता न करते हुए हिन्दुओं को अपने विचार स्पष्ट रूप से एवं निर्भीकतापूर्वक रखने होंगे। हिन्दुओं को इस बात से सतर्क रहना होगा कि उनके विरोधी गुट मीडिया (प्रचार तन्त्र) तथा पाठ्य-पुस्तकों के माध्यम से उनके विचारों का विकृतिकरण न कर सकें। हिन्दुओं को अपनी प्राचीन आध्यात्मिक धरोहर की रक्षा के लिए कटिबद्ध होना चाहिए चाहे इसके चलते संकुचित विचारोंवाले समाज से टकराव की स्थिति ही क्यों न पैदा हो। उन्हें सत्य पर ही दृढ़ रहना चाहिये जो आमतौर पर जनप्रिय नहीं होता। हिन्दू बुद्धिजीवियों को प्रत्येक को साग्रह अनुकूल बनाने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

दूसरी बात यह है कि हिन्दुओं को सामाजिक स्तर पर संगठित शक्ति का प्रदर्शन करते हुए धर्म को मन्दिर तथा आश्रम की परिधि से उन्मुक्त करके जीवन तथा संस्कृति के व्यापक आयाम पर प्रतिस्थापित करने का प्रयास करना चाहिए। हिन्दू बुद्धिजीवियों को केवल अपने हिन्दू-समाज को ही नहीं सुधारना चाहिए अपितु अपनी महान् यौगिक एवं आध्यात्मिक परम्परा के सिद्धान्तों के आधार पर अखिल विश्व के कल्याण का भी उद्योग करना चाहिये जो एक ओर तो भौतिकवाद के दलदल में आकण्ठ फँसा हुआ है तथा दूसरी ओर मज़हबी कट्टरता के जाल में आबद्ध है। हिन्दुओं को गम्भीरता से आत्म-मंथन करना चाहिए कि हम विभाजित क्यों हैं तथा सामयिक चुनौतियों का सामना करने में सक्षम क्यों नहीं हो रहे हैं?

हिन्दुओं ने प्राचीन काल में उपर्युक्त दोनों कर्त्तव्यों का समुचित सम्पादन किया था। आधुनिक समय में भी महर्षि अरविन्द तथा स्वामी विवेकानन्द ने पाश्चात्य दर्शन, संस्कृति एवं धर्म की सटीक एवं अकाट्य तर्कों द्वारा आलोचना की, दूसरी ओर अध्यात्म, योग एवं वैदिक प्रतिमान के आधार पर भारत के पुनरुत्थान का प्रयास किया। दुर्भाग्यवश आधुनिक भारत के चिन्तकों ने इन मनीषियों का अनुसरण नहीं किया। ये लोग पथ से भटक गए इसीलिए इतनी सामयिक समस्याओं का निर्माण हुआ है। अब भी समय है कि इस प्रवाह का दिशा-परिवर्तन किया जाय।

प्रस्तुत ग्रन्थ 'भारत के नव-निर्माण का आह्वान' हिन्दुओं को जागने एवं उठ कर कर्म करने की प्रेरणा का आह्वान करता है।

उत्तिष्ठ कान्तेय (Arise Arjuna)
(हिन्दुत्व एवं आधुनिक विश्व)
डॉ० डेविड फ्राली
अनुवादक
केशवप्रसाद कायाँ
द्वितीय संस्करण : 2008
पृष्ठ : 208

सजिल्द: रु० 250.00/ **ISBN: 978-81-89498-22-1**
अजिल्द: रु० 175.00/ **ISBN: 978-81-89498-23-8**
प्रकाशक : अनुराग प्रकाशन, वाराणसी

''ऐ भारतवासियों तुम अपनी गौरवशाली विरासत को पहचानो। अपनी प्राचीन संस्कृति एवं वैदिक धर्म के रहते हुए तुम क्यों हीन भावना से ग्रस्त हो? तुम्हारा धर्म विश्व के अन्य प्रवर्तक धर्मों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ एवं कल्याणकारक है। हे अर्जुन! (भारतवासी) उठो! जागो! अपने आत्म-सम्मान को पहचानो और हीन भावना को त्यागो।''

दुर्भाग्यवश आज भारतवर्ष अपनी प्राचीन गौरवशाली प्रतिष्ठा को भूलकर, तमोगुण से प्रभावित हो, तन्द्राग्रस्त हो रहा है। इसके बावजूद 20वीं शताब्दी में इसने आध्यात्मिक जगत् में उच्च कोटि के साधकों को पैदा किया। आवश्यकता है भारत इस तन्द्रा से जागे, इसी में न केवल भारत का, अपितु विश्व का कल्याण निहित है।

भारत को जगाने के लिए लिखी गई यह पुस्तक केवल भारत के लिए ही नहीं अपितु, विश्व की सम्पूर्ण संकटग्रस्त मानवता को जगाने के लिए है।

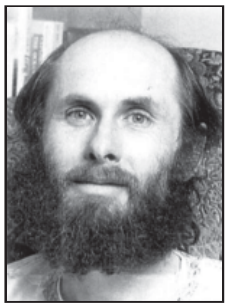

डेविड फ्राली (वामदेव शास्त्री) पश्चिम के कुछ उन चुने हुए वेदाचार्यों में हैं जिनकी भारत में वेदों के महापण्डित के रूप में मान्यता एवं प्रतिष्ठा है। उनके ज्ञान की विस्तृत परिधि में आयुर्वेद, वैदिक-ज्योतिष, तन्त्र, योग तथा वैदिक दर्शन समाहित हैं। उनके अध्ययन का मुख्य आधार वेद है तथा उसमें अधुनातन पुरातात्त्विक अन्वेषणों के आलोक में भारत के प्राचीन इतिहास का एवं वेदों का आलोचनात्मक अध्ययन भी जुड़ा हुआ है। पिछले पन्द्रह वर्षों में उन्होंने दस से भी अधिक ग्रन्थों का लेखन किया है तथा भारत एवं अमेरिका की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में विभिन्न विषयों पर उनके अनेक लेख प्रकाशित हुए हैं। भारत में वेदों पर उनके द्वारा लिखित भाष्य एवं अनुवादों की आध्यात्मिक तथा विद्वत् समुदाय में यथोचित मान्यता हुई है। आजकल वे सान्टा फे, न्यू मेक्सिको 87504-8356 (यू०एस०ए०) [Santa Fe, New Mexico 87504-8356 (U.S.A.)] में अमेरिकन इन्स्टीट्यूट ऑफ वैदिक स्टडीज में निदेशक के पद पर कार्यरत हैं।

प्रस्तुत पुस्तकद्वय के विषय से सम्बन्धित उनके अन्य ग्रन्थ हैं—हिन्दूइज़्म, द एटर्नल ट्रेडिशन (सनातन धर्म), सनातन धर्म (व्हायस ऑफ नॉलेज फॉर द मॉडर्न एज), विज़डम ऑफ द एन्सियेन्ट सीयर्स : सेलेक्टेड मन्त्रास फ्राम द ऋग्वेद, वैदिक आर्यन्स एण्ड द ओरिजिन ऑफ सिविलिजेशन (नवरत्न एस० राजाराम के साथ सह लेखन—इन्टरनेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डियन स्टडीज 1994) अवेकेन भारत : ए कॉल फॉर इन्डियाज़ रीबर्थ (व्हायस ऑफ इन्डिया 1997)।

श्री फ्राली भारतीय अध्यात्म, संस्कृति और हिन्दू-धर्म के एक अद्यतन उत्कृष्ट चिन्तक हैं। विभिन्न धर्मों और आध्यात्मिक मूल्यों का जितना मार्मिक और निर्भीक तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है, उससे आपके गहन अध्ययन और गम्भीर चिन्तन पर प्रकाश पड़ता है। अभारतीय होते हुए भी हिन्दू धर्म के उदात्त तत्त्वों को महत्ता प्रदान करने की जो आकुलता आपमें दिखाई देती है वह किसी बिरले ही भारतीय में ही विद्यमान हो सकती है।

प्रमुख मनीषी, संत, महात्मा

भारत हमेशा से ही मनीषी, संतों, महात्माओं, योगियों, संन्यासियों की तपोभूमि रहा है। जिन्होंने देश की चिन्तनधारा और जीवन को प्रभावित किया है। भारत को विश्व का आध्यात्मिक गुरु बनाया है जिससे सम्पूर्ण विश्व की मानवता लाभान्वित हुई है। ऐसे संतों-महात्माओं के जीवन-चरित की कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

काशी के अध्यात्मवेत्ता विद्वान संन्यासी
पं० बलदेव उपाध्याय
(*शीघ्र प्रकाश्य*)

- श्री गौड़ स्वामी
- श्री तैलंग स्वामी
- श्री देवतीर्थ स्वामी
- श्री स्वामी महादेवाश्रम
- श्री स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती
- श्री स्वामी भास्करानन्द सरस्वती
- श्री स्वामी ज्ञानानन्द
- श्री स्वामी करपात्रीजी
- दतिया के स्वामीजी
- श्री स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती

महाराष्ट्र के संत-महात्मा
ना०वि० सप्रे
मूल्य : सजिल्द 200.00, अजिल्द 120.00

- भक्त पुंडलिक
- संत ज्ञानेश्वर
- संत नामदेव
- संत गोरोबा
- संत जनाबाई
- संत कान्होपात्रा
- संत श्री सेनामहाराज
- संत चोखामेळा
- संत भानुदास
- संत एकनाथ
- संत तुकाराम
- संत बहिणाबाई
- संत रामदास
- शिर्डी के साईंबाबा
- संत गजानन महाराज

महाराष्ट्र के कर्मयोगी
ना०वि० सप्रे
मूल्य : अजिल्द 80.00 रुपये

- महात्मा फुले
- गोपाल गणेश आगरकर
- महर्षि कर्वे
- महर्षि विट्ठल रामजी शिंदे
- संत गाडगेबाबा
- डॉ० भीमराव आंबेडकर
- संत तनपुरे महाराज
- कर्मवीर भाऊराव पाटील
- श्री रघुनाथ धोंडो कर्वे

साधु दर्शन एवं सत्प्रसंग
म०म०पं० गोपीनाथ कविराज
(भाग : 1-2) मूल्य : अजिल्द 70.00

● महात्मा ज्योति जी, ● तत्संगी महात्मा की कथा, ● सोहं सिद्ध बाबा की कहानी, ● रामठाकुर की कहानी, ● एक अद्भुत बालक की कहानी, ● किशोरी भगवान्, ● श्री श्री नागाबाबा, ● श्यामदास बाबाजी, ● योगत्रयानन्दजी, ● पागल साधु, ● सीतारामदास बाबाजी की कथा, ● सिद्धि माता, ● कालीनाथ बाबा

साधु दर्शन एवं सत्प्रसंग
म०म०पं० गोपीनाथ कविराज
(भाग : 3) मूल्य : अजिल्द 50.00 रुपये

● रामदयाल मजुमदार, ● पालधी महाशय, ● तारकेश्वर माँ, ● सतीशचन्द्र मुखोपाध्याय, ● जगदीश मुखोपाध्याय, ● टीला बाबा रासबिहारी साधु, ● स्वामी ब्रह्मानन्द, ● नवीनानन्द, ● अन्ध मास्टर, ● माधव पागला, ● दिगम्बर बाबा, ● लोकनाथ ब्रह्मचारी, ● हरिहर बाबा, ● परमहंस विशुद्धानन्दजी महाराज, ● आनन्दमयी माँ, ● मधुसूदन ओझा, ● मेहेर बाबा

पूर्वांचल के संत-महात्मा
परागकुमार मोदी
मूल्य : अजिल्द 60.00 रुपये

- पवहारी बाबा
- खाकी बाबा
- नरहरि बाबा
- चैनराम बाबा
- मौनी बाबा
- नागा बाबा
- जंगली बाबा
- महाराज बाबा
- स्वामी भास्करानन्द
- खपड़िया बाबा
- सोहराब बाबा
- शाह बाबा
- परहेजी बाबा
- गुरुनाथ अवधूत
- औघड़दानी हठयोगी
- हरिहर बाबा
- शिवस्वरूप तैलंग स्वामी
- बाबा लोटादास
- अघोरसंत बाबा कीनाराम
- देवराहा बाबा

आधुनिक भारत के युग-प्रवर्तक संत
लक्ष्मी सक्सेना
मूल्य : सजिल्द 250.00, अजिल्द 150.00

- रामकृष्ण परमहंस
- स्वामी विवेकानंद
- स्वामी रामतीर्थ
- महर्षि रमण
- श्री अरविन्द
- स्वामी रामानन्द

कुछ विशिष्ट जीवन-चरित

श्रीश्री सिद्धिमाता— राजबाला देवी	80
योगिराज तैलंग स्वामी— विश्वनाथ मुखर्जी	40
ब्रह्मर्षि देवराहा दर्शन— डॉ० अर्जुन तिवारी	50
प्रकाश पथ का यात्री— योगेश्वर	160
अघोरपंथ और सन्त कीनाराम— मिश्र	250
शिवस्वरूप बाबा हैड़ा खान— श्रीवास्तव	150
बाबा नीब करौरी के अलौकिक प्रसंग	250
सोमबारी महाराज— हरिश्चन्द्र मिश्र	40
संत रैदास— पद्मावती झुनझुनवाला	60
रैदास परिचई— डॉ० शुकदेव सिंह	25
समर्थ रामदास— ना० वि० सप्रे	50
स्वामी दयानन्द जीवनगाथा— भारतीय	120

तन्त्र मन्त्र साहित्य

पं० अरुणकुमार शर्मा
की नवीनतम व सम्पूर्ण कृतियाँ
(सत्य घटनाओं पर आधारित योग तन्त्रपरक कथाएँ)

वक्रेश्वर की भैरवी	180
तिब्बत की वह रहस्यमयी घाटी	180
मृतात्माओं से सम्पर्क	200
वह रहस्यमय कापालिक मठ	180
वह रहस्यमय संन्यासी	250
आकाशचारिणी	180
तीसरा नेत्र (प्रथम खण्ड)	250
तीसरा नेत्र (द्वितीय खण्ड)	250
मरणोत्तर जीवन का रहस्य	250
परलोक विज्ञान	300
मारण पात्र	300
कारण पात्र	200
कुण्डलिनी शक्ति	275
अभौतिक सत्ता में प्रवेश	200

प्राप्त पुस्तकें / पत्रिकाएँ

अरुणाचल में हिन्दी : डॉ० श्यामसुन्दर सिंह, विद्या भारती प्रकाशन, केदार रोड, गुवाहाटी-1 (असम), मूल्य : रु० 150.00

देश पूर्वोत्तर क्षेत्र में राष्ट्रभाषा/राजभाषा हिन्दी के प्रसार और प्रयोग की दृष्टि से काम नहीं के बराबर हुआ है। ऐसी स्थिति में डॉ० श्याम शंकर सिंह का इस ओर प्रवृत्त होना और पूर्वोत्तर के अंतिम छोर पर स्थित अरुणाचल प्रदेश में हिन्दी की स्थिति का आकलन करना एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। इस शोधपरक पत्र में अरुणाचल प्रदेश की भौगोलिक, ऐतिहासिक स्थिति का विवेचन करते हुए वहाँ की जनजातियों की अलग-अलग बोलियों के बीच असमी और हिन्दी भाषा के संपर्क-प्रयोग की छानबीन की गयी है। अरुणाचल में नागरी की सगोत्र दो लिपियाँ 'खंपाती' और 'भूटिया' प्रचलन में हैं। इनमें से प्रथम खंपाती, ब्राह्मी लिपि से सीधे विकसित है और दूसरी भूटिया या तिब्बती लिपि भी ब्राह्मी का ही संशोधित रूप है। वस्तुत: अरुणाचल की भाषाओं-बोलियों-उपबोलियाँ का अभी सर्वेक्षण भी नहीं हुआ है। ऐसी स्थिति में लेखक का यह स्तुत्य प्रयास है।

रंग प्रहरी : कृष्णकान्त श्रीवास्तव, अमृत प्रकाशन, के० 67/81, ए-1, ईश्वरगंगी, वाराणसी, मूल्य : रु० 100.00

एक नाट्यधर्मी कलाकार, अभिनेता, निर्देशक कृष्णकांत श्रीवास्तव ने अपनी रंगयात्रा के अनुभवों को सँजोकर उसे नाट्य-शिल्प में व्यक्त करने का जो प्रयास किया है वह है उनके 5 नाट्य आलेखों का संग्रह 'रंग प्रहरी'। **प्रहरी, एकता की नाव, महाशक्ति, मर गई मुनिया,** और **मैं** का लेखक एक प्रकाशपुंज हाथ में लिये प्राचीन दार्शनिक 'डायोजनीज़' की तरह 'मनुष्य' की तलाश कर रहा है। वह एक प्रहरी की तरह अपने वर्तमान के चौराहे पर खडा होकर मनुष्य के भीतर सोये मनुष्य को आवाज दे रहा है, उसे जगा रहा है—''रहो जागते, रहो जागते....!'' विभिन्न नाट्य प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत ये नाट्य-आलेख रंगकर्मियों के लिये उपयोगी सिद्ध होंगे।

हाइकु यात्रा (हाइकु संग्रह) : कशमीरीलाल चावला, अमर ज्योति प्रकाशन, 822 कच्चा फिरोजपुर रोड, मुक्तसर-152026, मूल्य : रु० 50.00

जापानी कविता के प्रिय छंद 'हाइकु' में पंजाबी के कवि कशमीरी लाल चावला की हाइकु रचनाओं का संकलन है 'हाइकु-यात्रा'। मूल पंजाबी में लिखी ये रचनाएँ गुरुमुखी-लिपि में पंजाबी में और हिन्दी अनुवाद सहित नागरी-लिपि में एक साथ प्रकाशित की गयी हैं। समकालीन या नवजीवन की त्रासदियों के बीच से उपजे ये हाइकु सारगर्भित एवं चोट करने वाले हैं।

''काले वक्त के/काले लेख लिखती/काली ज़िन्दगी''

स्वर्ग से जम्बूद्वीप तक : डॉ० वेद शर्मा, वेदान्त प्रकाशन, राया, मथुरा, मूल्य : रु० 100.00

आज की दौड़ भागभरी, यांत्रिक जीवन शैली में इतना सांस्कृतिक अवकाश कहाँ कि पाठक साहित्य का रस ले सकें, संगीत-तरंगों में आनंदमग्न हो सकें। डॉ० वेदवर्मा अपनी लघुकथाओं के माध्यम से मनुष्य के चेहरे पर मुस्कान लाने का प्रयत्न कर रहे हैं, जो एक सराहनीय कार्य है। व्यंग्य को अब तक साहित्यिक प्रतिष्ठा प्राप्त हो चुकी है, उसी कड़ी में 'स्वर्ग से जंबूद्वीप तक' एक नवीन लघुकथा-संग्रह है, जिसकी कथाएँ चोट भी करती हैं, मरहम भी लगाती हैं, मुस्कान भी देती हैं।

सत्ताइस दिन तितली के : कवि सुब्रतदास (बांग्ला), हिन्दी अनुवाद : नीलम शर्मा और इना सेनगुप्त, सदीनामा प्रकाशन, एच-5, गर्वनमेंट क्वार्टर्स, बजबज, कोलकाता-700137, रु० 50.00

''अविराम शब्द दूषित कर रहा है शताब्दी की राह/मैं सोच रहा हूँ भूति-भविष्य/कौन हूँ मैं/कहाँ हूँ/कहाँ जा रहा हूँ/कौन देगा जवाब/ मिसाइल की आवाज़/''...! कवि जीवन की तमाम विसंगतियों, विभीषिकाओं के बीच जीवन के सौन्दर्य, राग, आनंद की तलाश कर रहा है; जड़ चेतन में प्रकृति में, मनुष्य में, पशु-पंक्षियों, कल-कारखानों में हर जगह वह जीवन संगीत के सुरों की सरगम बिखेरने का प्रयत्न करता है।

भारतीय वाङ्मय

मासिक

वर्ष : 9 **मई 2008** **अंक : 5**

संस्थापक एवं पूर्व प्रधान संपादक

स्व० पुरुषोत्तमदास मोदी

संपादक : **परागकुमार मोदी**

वार्षिक शुल्क : रु० 50.00

अनुरागकुमार मोदी

द्वारा

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

के लिए प्रकाशित

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०

वाराणसी *द्वारा मुद्रित*

डाक रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2003 RNI No. UPHIN/2000/10104

प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत

Licenced to post without prepayment at G.P.O. Varanasi

Licence No. LWP-VSI-01/2001

सेवा में,

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

☎ : Offi. : (0542) 2413741, 2413082, 2421472, (Resi.) 2436349, 2436498, 2311423 ● Fax : (0542) 2413082

E-mail : sales@vvpbooks.com ● Website : **www.vvpbooks.com**

विश्वविद्यालय प्रकाशन

प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

(विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह)

विशालाक्षी भवन, पो०बॉक्स 1149

चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN

Premier Publisher & Bookseller

(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIANS)

Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149

Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)